क्योंकि पढ़े लिखे लोगों में मूर्ख को बड़ा लज्जित होना पड़ता है।

गुणवानों की गिनती के आरम्भ में जिसके लिए अंगुली भूल से भी नहीं उठाई जाती है अगर ऐसे लड़के से उसकी माँ लड़के वाली है तो बाँझ कैसी ? अर्थात् वही बाँझ है।

इसलिए जिस प्रकार इनकी बुद्धि में प्रकाश हो, वैसा ही उपाय किया जावे। यहाँ पर मेरी दी हुई जीविका को भोगने वाले पाँच सौ पण्डित रहते हैं। सो जिस तरह मेरी कामना पूरी हो सके वैसा ही अनुष्ठान करो। उनमें से एक ने कहा कि हे राजा! बारह वर्ष में व्याकरण पढ़ा जाता है, फिर मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र चाणक्य आदि, कामशास्त्र वात्स्यायन आदि; इनके बाद धर्म, अर्थ, और कामशास्त्र पढ़े जाते हैं तब ज्ञान होता है। तब उनमें से सुमति नाम मन्त्री कहने लगा कि जीवन का विषय अनित्य (सदा न रहने वाला) है और शब्दशास्त्र बहुत दिनों में पढ़े जाते हैं इसलिए इनके जानने के लिए किसी मामूली शास्त्र का विचार करो क्योंकि—

क्योंकि पढ़े लिखे लोगों में मूर्ख को बड़ा लज्जित होना पड़ता है।

गुणवानों की गिनती के आरम्भ में जिसके लिए अंगुली भूल से भी नहीं उठाई जाती है अगर ऐसे लड़के से उसकी माँ लड़के वाली है तो बाँझ कैसी ? अर्थात् वही बाँझ है।

इसलिए जिस प्रकार इनकी बुद्धि में प्रकाश हो, वैसा ही उपाय किया जावे। यहाँ पर मेरी दी हुई जीविका को भोगने वाले पाँच सौ पण्डित रहते हैं। सो जिस तरह मेरी कामना पूरी हो सके वैसा ही अनुष्ठान करो। उनमें से एक ने कहा कि हे राजा ! बारह वर्ष में व्याकरण पढ़ा जाता है, फिर मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र चाणक्य आदि, कामशास्त्र वात्स्यायन आदि; इनके बाद धर्म, अर्थ, और कामशास्त्र पढ़े जाते हैं तब ज्ञान होता है। तब उनमें से सुमति नाम मन्त्री कहने लगा कि जीवन का विषय अनित्य (सदा न रहने वाला) है और शब्द-शास्त्र बहुत दिनों में पढ़े जाते हैं इसलिए इनके जानने के लिए किसी मामूली शास्त्र का विचार करो क्योंकि—

शब्दशास्त्र का पार नहीं है, उम्र थोड़ी है और विघ्न बहुत हैं। इसलिए जिस प्रकार हंस जल में से दूध निकाल लेता है उसी तरह सार को ग्रहण करे और असार को छोड़ देवे।

सो यहाँ पर सब शास्त्रों को जानने वाला और पढ़ने वालों में बड़ाई को पाया हुआ, एक विष्णुशर्मा ब्राह्मण रहता है। अपने लड़कों को उसे सौंप दो। वह शीघ्र ही इनको ज्ञानवान् बना देगा। ये वचन सुन कर राजा ने विष्णुशर्मा को बुला कर कहा कि—मुझ पर कृपा कर, इन मेरे लड़कों को शीघ्र ही जैसे बने तैसे अर्थशास्त्र का अच्छी तरह जानने वाला बना दो। मैं तुमको सौ संख्या वाली संपत् दूँगा। तब विष्णुशर्मा राजा से बोले कि हे देव! मेरे सच वचन को सुनो। मैं धन से अपनी विद्या बेचता नहीं। परन्तु तुम्हारे इन लड़कों को यदि छः ही महीने में नीति-शास्त्र का जानने वाला न बना दूँ तो अपना नाम न रक्खूँ। बहुत कहने से क्या है, मेरी सिंह की नाईं गर्जना सुनो। धन की [illegible] मैं नहीं करता, अस्सी वर्ष वाला मैं सब [illegible] भोग से सन्तुष्ट हूँ। धन से मुझे कुछ

प्रयोजन नहीं है किन्तु तुम्हारी प्रार्थना पूरी करने के लिए मैं पढ़ाने को तैयार हूँ। आज की तिथि आप लिख लीजिए, यदि मैं छः ही महीने में तुम्हारे पुत्रों को विद्या का सब से अच्छा जानने वाला न बना दूँ तो परमात्मा मुझको स्वर्ग न दिखावे। तब वह राजा ब्राह्मण की असम्भव सी प्रतिज्ञा सुन कर मंत्रियों के सहित प्रसन्न हो, आश्चर्य करने लगा और उन कुमारों को अत्यन्त आदर से उसे सौंप कर सन्तुष्ट हुआ। विष्णुशर्मा ने उनको स्वीकार कर, उनके लिए मित्रभेद, मित्र-सम्प्राप्ति, काकोलूकीय, लब्धप्रणाश और अपरीक्षित कारक, ये पांच तन्त्र रच कर, उन राज कुमारों को पढ़ाये। वे राजकुमार उनको पढ़ कर छः महीने में जैसा विष्णुशर्मा ने कहा था वैसे ही हुए। उसी दिन से यह पंचतन्त्र नामक नीतिशास्त्र बालकों के ज्ञान के लिए पृथ्वी भर में विख्यात है।

जो इस नीतिशास्त्र को पढ़ता और सुनता है वह कभी इन्द्र राजा से भी नहीं हारता; वह महा विद्वान् बन कर सर्वत्र विजय पाता है।

मित्रभेद

पहला तंत्र

वन में रहने वाले सिंह और बैल दोनों आपस में बड़े सनेही थे। उनके स्नेह को चुग़लख़ोर और लालची गीदड़ ने नष्ट कर दिया था। वह इस प्रकार सुना जाता है कि दक्षिण-देश में महिलारोप्य नाम एक नगर था। उसमें धर्मपूर्वक धन को कमाने वाला वर्धमान नाम एक बनिये का लड़का रहता था। एक दिन चारपाई पर लेटे हुए उस लड़के के मन में चिन्ता हुई कि बहुत धन के होते हुए भी और भी धन की प्राप्ति का उपाय करना चाहिए। क्योंकि—

संसार में ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो धन से सिद्ध न होती हो। इसलिए होशियार आदमी बड़ी कोशिश से धन को कमावे।

जिसके पास धन होता है उसी के मित्र होते हैं, जिसके पास धन है उसी के बंधु हैं, लोक में धनी ही पुरुष माना जाता है, और धनी ही पण्डित समझा जाता है।

न वह विद्या है, न वह दान है, न वह कारीगरी है, न वह कला है, न वह धनियों की स्थिरता है ; जिसको माँगने वाले नहीं गाते।

संसार में धनियों के, दूसरे मनुष्य भी अपने धन जाते हैं और गरीबों के साथ अपने मनुष्य भी दुर्जन का सा बर्त्ताव करते हैं।

धन के बढ़ने से और इधर उधर इकट्ठा होजाने से सब [illegible] से नदियां [illegible]

धन [illegible] है, जिसके पास कोई नहीं आ सकता उसके पास भी धन होने पर लोग चले जाते हैं। जिसको कोई नमस्कार आदि नहीं कर सकता उसको भी धन होने पर लोग नमस्कार करने लगते हैं, यह धन की ही महिमा है।

जिस तरह भोजन करने से सब इन्द्रियां अपना अपना काम करने को समर्थ होती हैं इसी तरह सब काम धन से हुआ करते हैं इस कारण धन ही सब कामों का साधन बतलाया गया है।

मनुष्य धन की इच्छा से श्मशान भूमि का भी सेवन करता है और गरीब आदमी अपने

उत्पन्न करने वाले को भी छोड़ कर दूर चला जाता है।

जिनके पास धन होता है वे बुड्ढे भी जवान गिने जाते हैं और जिनके पास धन नहीं होता वे जवान होते हुए भी बुड्ढे ही माने जाते हैं।

धन पुरुषों को छः उपायों से मिलता है—१ भिक्षा से, २—राज सेवा से, ३—खेती से, ४—विद्या से, ५—व्यवहार से, ६—व्यापार से। इन सब में व्यापार करने से धन-लाभ होने में सब की राय है। क्योंकि अनेक पुरुषों ने भिक्षा की है, राजा भी अच्छी वृत्ति नहीं देता, खेती में तकलीफ़ होती है, विद्या भी गुरु के साथ नम्रता करने के कारण अत्यन्त कठिन है, व्याज से दरिद्र होता है, कारण यह है कि शायद कोई धरोहर ही मार ले। इस लिए व्यापार से बढ़ कर कोई धन लाभ का अच्छा उपाय नहीं है।

सम्पूर्ण उपायों में बेचने योग्य द्रव्य का संग्रह ही एक उत्तम उपाय है, और सब संदेहवाले हैं।

धन के लिए व्यापार कई तरह का होता है। जैसे—१—गन्ध द्रव्य का व्यापार २—रुपये को अपने यहाँ जमा कर के रुपये वाले को सूद देना ३—गोसम्बन्धी

काम ४—पहचाने हुए ग्राहकों का आना ५—थोड़ी क़ीमत में ख़रीदी हुई चीज़ को अधिक क़ीमत में वेचना ६—दूसरे देशों से बर्तन लाना।

वेचने योग्य चीज़ों में सुगन्धित चीज़ों का व्यापार अच्छा है। सोने आदि से क्या ? जो एक रुपये से ख़रीदे हुए सौ को बेचे जाते हैं।

धरोहर घर में आने से वैश्य अपने देवता की स्तुति करता है कि अच्छा धन आया।

गौ आदि के काम में लगा पुरुष प्रसन्न हो कहता है कि मैंने धन से सब पृथ्वी को प्राप्त कर लिया और क्या चाहिए।

पहचाने हुए ग्राहक को आता हुआ देख कर उसके धन से ऐसा प्रसन्न होता है कि मानों पुत्र पैदा हुआ। और कम तौल कर मनुष्य को ठगना और झूठ बोलना राक्षसों का काम है। दूसरे देश ले जाकर चीज़ों का बेचने वाला बहुत लाभ उठाता है।

इस प्रकार मन में विचार कर मथुरा के जाने वाले भांडों को साथ लेकर अच्छी तिथि में गुरुओं की आज्ञा लेकर और रथ पर चढ़ कर वर्धमान चला। उस के घर में पैदा हुए मङ्गल-वृषभ संजीवक और नन्दक

नाम दो बैल थे। संजीवक बैल यमुना के कि
पहुँच कर बड़ी दल दल में फँस जाने से लँग
हो गया और जुआ गिरा कर खड़ा हो गया।
उस बैल की यह हालत देख कर वर्द्धमान ब
दुखी हुआ और उसके कारण तीन रात तक व
रहा। उस समय उसको दुख में पड़ा देख
साथी कहने लगे कि हे सेठ! इस बैल के कार
सिंहादि भयानक जानवरों से युक्त विपत्ति व
इस वन में सब साथियों को तुमने संदेह में ड
रक्खा है। नीति में कहा है कि—"बुद्धिमान् मनु
थोड़े के लिए बहुत का नाश न करे। थोड़े
बहुत की रक्षा करे। यह पण्डिताई है"। तब
विचार कर संजीवक बैल के लिए रक्षा करने व
मनुष्यों को छोड़ कर और बाक़ी सब साथियों
साथ में लेकर चल दिया। रक्षा करने वाले भी
वन को बड़ा भयावना देख कर दूसरे दिन संजीव
को वहीं छोड़ कर मालिक के पास जा कहने
कि संजीवक मर गया। चूँ कि वह आप को प्या
था इससे उसका अग्नि-संस्कार हमने कर दि
है। नौकरों की यह बात सुन कर सेठ जी
अप्रसन्न हुए।

संजीवक कुछ उम्र बाक़ी रहने के कारण यमुना
जल से मिली हुई ठंढी हवा पाकर किसी तरह
नारे पर पहुँचा। मरकत मणि के समान
मकीले छोटे छोटे तिनकों को खा कर कुछ दिनों में
इ बड़ा बलवान् हो गया और इधर उधर गर्जता
रा क्योंकि:—

परमात्मा जिसकी रक्षा करते हैं, उसकी कोई
रक्षा करने वाला न होने पर भी वह रक्षित
हता है और दैव जिसकी रक्षा करना नहीं चाहता
सकी चाहे जैसी रक्षा की जावे, कभी कोई जीवित
हीं रह सकता। वन में जिसका कोई भी न हो तो
ा दैव की रक्षा से जीता रहता है और यत्न करने
र भी घर में जीना नहीं रह सकता।

एक समय पिङ्गलक नाम सिंह सब जानवरों
ः साथ प्यास से घबराया हुआ जल पीने के लिए
ामुना के किनारे आया। उसने संजीवक की दूर
े गर्जने की आवाज़ सुनी। वह भय से घबरा कर
रगद के पेड़ के नीचे चारों ओर दूसरे जानवरों को
ाड़ा कर बैठ गया।

करटक और दमनक ये दो मंत्री के पुत्र थे और
ापने अपने अधिकार से अलग कर दिये गये थे,

तो भी पिङ्गलक का बड़ा साथ देने वाले थे।
दोनों आपस में सलाह करने लगे। दमनक बोला,
प्यारे करटक ! यह हमारा स्वामी पिङ्गलक जल पी
को यमुना के किनारे आया है। क्या कारण है
प्यास से दुखी हो कर भी, लौट कर अपनी
को अपने चारों ओर बैठा कर, दुखी हुआ
बरगद के नीचे बैठा है। करटक ने उत्तर दिया
प्यारे ! हमको इस काम से क्या प्रयोजन है; क्यों
जो पुरुष बिना अधिकार के अधिकार की इ
करता है, वह नष्ट हो जाता है, जिस त
कील को उखाड़ कर बन्दर दुखी हुआ था। दम
ने कहा कि यह कैसे ? करटक कहने लगा—

१—बन्दर की कहानी

किसी नगर के पास एक बनिये के
लड़के ने वृक्षों के बीच में देवस्थान बनाना शुरू
किया। उस देव स्थान को बनाने वाले नौकर दोप
हर को भोजन करने के लिए शहर को चले गये। एक
समय बहुत बन्दरों का झुंड इधर उधर घूमता हुआ
वहाँ आया। उस जगह पर किसी एक कारीगर का
आधा चीरा हुआ एक वृक्ष का तख़्ता रक्खा

ा, उसके बीच में वह कारीगर खैर की खूंटी लगा
र चला गया था। बन्दरों का झुंड कभी किसी
ृक्ष पर, कभी किसी पर, कभी लकड़ियों के चारों
ार खेलने लगा। उस झुंड में से एक बन्दर, जिस
ी मौत नज़दीक आ गई थी, अपनी चञ्चलता से
स आधे चीरे हुए तख़्ते पर बैठ कर बड़े ज़ोर से
खूंटी को उखाड़ने लगा। खूंटी के उखाड़ते ही
मीबन्दर उसमें फँस गया और उसको बड़ा दुख
ुआ। इससे मैं कहता हूँ कि बिना अधिकार के
ुसी अधिकार की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। हम
ों का खाने से बचा भोजन रक्खा ही है, फिर
ुस काम के करने से क्या प्रयोजन है। दमनक ने
ा कि क्या आप केवल आहारमात्र की इच्छा
ते हैं? सो ठीक नहीं है, क्योंकि—मित्रों की
लाई करने के विचार से और दुश्मनों को नुक़सान
ुंचाने के विचार से बुद्धिमान् मनुष्य राजा का
ाश्रय लिया करते हैं, सिर्फ़ अपना पेट कौन नहीं
र लेता? क्योंकि—

जिसके जीने से बहुत से पुरुष जीते हैं वही मनुष्य
ता हुआ समझा जाता है। क्या पक्षी अपनी
च से अपना पेट नहीं भर लेते?

जो एक क्षण भी मनुष्यों से प्रतिष्ठा पाकर विज्ञान, बहादुरी, और ऐश्वर्य के गुणों के सहित जीता है उसके गुणों के जानने वाले उसी को जीता हुआ बतलाते हैं। यों तो कौआ भी बहुत दिन तक जीता रहता है और पेट पाला करता है।

जो न अपने में, न दूसरों में, न भाइयों में, न दीनों में, और न मनुष्यों में दया करता है उसका इस मनुष्य लोक में जीने का क्या फल है? यों तो कौआ भी बहुत दिन जीता रहता है।

छोटी नदी, जल से जल्दी भर जाती है, चूहे की अंजली भी जल्दी भर जाती है और छोटे मनुष्य भी जल्दी ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। ये सब थोड़ी सी चीज़ से ही जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं।

अपनी माता की जवानी नष्ट करने वाले उस पुरुष के पैदा होने से क्या है? जो अपने कुल में ध्वजा के आगे के हिस्से की तरह प्रतिष्ठित नहीं होता।

इस आने जाने वाले संसार में कौन नहीं मरा और कौन पैदा नहीं हुआ? पैदा हुआ वही समझा जाता है जो अधिक लक्ष्मी प्राप्त करके उत्साहवान् होता है।

नदी के किनारे पैदा हुए उस तिनके का भी जन्म सफल समझा जाता है जो जल में डूबने से ...

विद्वान् मनुष्य उस पुरुष के जन्म से उसकी माता की अधिक सहिष्णुता को याद किया करते हैं ... बड़े बड़े पुरुषों को भी भारी होता है।

अपनी ताक़त का जौहर न दिखाने वाले ताक़तवर पुरुष का भी लोग तिरस्कार करते हैं जिस प्रकार न जलती हुई काठ के भीतर की आग का सब तिरस्कार करते हैं। करटक कहने लगा कि—

हमतो यहाँ एक मामूली हैं। हमको इस काम से क्या प्रयोजन है? कहा है कि—

बिना पूँछने पर जो बेवकूफ़ राजा के आगे बोलने लगता है उसकी केवल बेइज़्ज़ती ही नहीं होती बल्कि उसका अनादर भी होता है। और भी कहा गया है—

वचन वहाँ कहना चाहिए जहाँ पर कहने का कुछ फल मिले, जिस प्रकार कि सफ़ेद कपड़े पर

रंग बहुत दिनों तक रहने वाला होता है। दमन कहने लगा कि ऐसा मत करो।

मामूली आदमी भी राजा की सेवा करने वाला बड़ा हो जाता है और सेवा न करने वाला बड़ा भी मामूली हो जाता है।

पास रहने वाले पुरुष को ही राजा लोग चाहा किया करते हैं चाहे वह मूर्ख हो, बुरे कुल में पैदा हुआ हो और संस्कार के विना भी हो। प्रायः राजा तथा वेल पास में रहने वाले को ही अपनाया करते हैं।

जो सेवक ग़ुस्से और ख़ुशी को मालूम करते रहते हैं वे धीरे धीरे अपने से विरक्त राजा को भी प्राप्त कर लेते हैं।

विद्वान्, कारीगर, बहादुर और सेवा करने को भले प्रकार जानने वालों का राजा के सिवा दूसरा कोई सहारा नहीं होता।

जो अपनी जाति आदि के घमंड के कारण राजा के पास नहीं जाते वे दुख भोगा करते हैं।

और जो वे समझे यह कहते हैं कि राजा बड़ी कठिनाई से सेवा करने के योग्य होता है, उन्होंने मानों अपनी भूल, आलस और बेवक़ूफ़ी ज़ाहिर की है।

। साँप, बाघ, हाथी और सिंहों को भी अच्छे पाय से वश में किया जाता है तो बुद्धिमानों को ाजा का वश में कर लेना कौन कठिन बात है ? । राजा के ही सहारे से बुद्धिमान् उन्नति को पाता क्योंकि मलयाचल पर्वत के सिवा और कहीं चन्दन हीं उगता।

सफ़ेद छत्र, मनोहर घोड़े और बड़े बड़े मस्त थी सदा राजा की ही प्रसन्नता से हुआ करते हैं। टक बोला कि फिर आप क्या करना चाहते हैं ? ने कहा—आज हमारा पिंगलक स्वामी कुटुम्बियों हित डर कर यहाँ बैठा है। इसके पास जाकर र भय के कारण को जानकर मेल, लड़ाई, शत्रु की र यात्रा, समय का देखना, बलवान् से छूटने के र दूसरे बलवान् का सहारा, इन उपायों में से का सहारा लूँगा। आप किस प्रकार जानते हैं मेरा स्वामी भय से डरा हुआ है ? वह बोला। इसके जानने में क्या है ? कहे हुए मतलब को वर भी समझ जाता है। हाथी, घोड़े चलाने का रा करने से बोझ ले जाते हैं; बुद्धिमान् बिना हुई भी बात को समझ लेते हैं क्योंकि दूसरे रादों को पहचानने के लिए ही बुद्धियाँ होती

हैं। जिस प्रकार कि मनु महाराज ने बतलाया है
सूरत से, संकेत से, जाने से, काम से, बोलने
आंख और मुँह में तब्दोली हो जाने से, इन कार
से मन के भीतर की बात समझ ली जाती है।

इस भय से डरे हुए अपने स्वामी के पास
कर अपनी बुद्धि से इसको निडर करूँगा और अ
वश में करके अपने मंत्री के पद को प्राप्त करूँ
करटक बोला कि आप सेवा करना नहीं जानते
इसको अपने वश में किस प्रकार करेंगे? वह क
लगा कि मैं सेवा करना क्यों नहीं जानता?
पिता की गोदी में खेलते हुए और वहाँ पर
हुए साधुओं को नीति-शास्त्र पढ़ते हुए सु
वह सेवा-धर्म का सार हृदय में मैंने रख लिय
उसे सुनो।

बहादुर, विद्वान् और जो सेवा करना जानत
ये तीनही प्रकार मनुष्य सोने के फूलों वाली
पृथिवी को प्राप्त करते हैं।

सेवा वही है जो मालिक का हित करने वाल
वह मालिक के वाक्य-द्वार से ग्रहण की जाती
विद्वान् पुरुष उस वाक्यरूप से राजा का आ
करे, दूसरा कोई उपाय नहीं है।

जो सेवा करने वाले के गुणों को नहीं जानता उस मनुष्य की सेवा नहीं करनी चाहिए क्योंकि उस से कोई फल नहीं मिलता जिस प्रकार ऊपर भूमि के जोतने से कुछ फल नहीं मिला करता।

जो सेवा करने के योग्य और गुणों का जानने वाला हो वह चाहे निर्धनी भी हो तो भी उसकी सेवा करनी चाहिए। उस मनुष्य से जन्मभर और कालान्तर में भी फल मिलता रहता है।

ठूंठ की तरह बैठा रहना, सूखता हुआ और बढ़ी भूख को भी सहते रहना अच्छा है, पर बेसमझ मालिक से बुद्धिमान् कुछ भी मिल जाने की आशा भी न करे।

सेवा करने वाला कंजूस मालिक की बुरी तरह निन्दा किया करता है। वह अपनी बुराई क्यों नहीं करता? इसका कारण यह है कि वह सेवा के धर्म को भले प्रकार नहीं जानता। उसको सेवा करने से पहले ही मालूम करना चाहिए कि मालिक कैसा है, अगर कंजूस है तो पहले से ही सेवा न करनी चाहिए।

भूख से घबराये हुए सेवक जिस मालिक के पास रह कर शान्ति और सुख नहीं पाते वह राजा

फूल फल वाला भी आक के वृक्ष के समान त्या
योग्य है।

राजा की माता, पटरानी, राजा का लड़
मुख्य मंत्री, पुरोहित और द्वारपाल; इनके स
राजा के समान व्यवहार करना चाहिए।

कौन काम करना ठीक है, कौन नहीं—इस
जानने वाला, बुलाते ही आदर के साथ बोलने वा
और अच्छे प्रकार राजा के हुक्म को बजा लाने वा
राजा का प्यारा बनता है।

जो मालिक की प्रसन्नता से पाये हुए धन अ
को सन्तोष के साथ ग्रहण करता है और उसके
वस्त्र आदि आदरपूर्वक लेकर अपने काम में ला
है वह राजा का प्यारा होता है।

रनवास में रहने वाले पुरुषों से सलाह न
करता और न राजा की स्त्रियों से बात चीत कर
है वह राजा का प्यारा होता है।

जो जुआ खेलने को यमदूत के समान, शरा
को विष के समान और स्त्रियों को विकार
खान समझता है वह राजा को प्यारा होता है।

जो लड़ाई के समय आगे आगे चले, शहर में पी

पीछे चले और महल में जाने के समय दरवाज़े पर खड़ा रहे वह राजा का प्यारा होता है।

"मालिक मुझसे प्रसन्न रहते हैं" ऐसा समझ कर जो पुरुष कठिनाई के समय मर्यादा को नहीं छोड़ता वह राजा का प्यारा होता है।

राजा के दुश्मनों से जो दुश्मनी करता है और प्यारों से प्यार करता है वह राजा का प्यारा होता है।

जो मालिक के कहने पर उलटा उत्तर नहीं देता और पास में ज़ोर से नहीं हँसता वह राजा का प्यारा होता है।

जो निडर होकर लड़ाई की जगह को घर के समान समझता है और परदेश को अपने नगर के समान जानता है वह राजा का प्यारा होता है।

जो राजा की स्त्रियों की संगति नहीं करता और न उनकी बुराई तथा उनसे झगड़ा भी नहीं करता वह राजा का प्यारा होता है।

करटक ने कहा—यह तो बतलाओ, तुम वहाँ जाकर पहले क्या कहोगे ? दमनक बोला—बात करने से वाक्य का उत्तर प्रत्युत्तर होने लगता है जिस प्रकार कि अच्छी वर्षा के गुणों से बीज से बीज पैदा होता जाता है।

हिए । बुद्धिमान् उसके साथ रह कर शीघ्र
ते वश में कर लेवे ।

मालिक की इच्छा के अनुसार बर्ताव करना
कों का सुशीलपन (अच्छा स्वभाव) समझा
ता है सदा उनके मतलब के मुआफ़िक़ चलने
ला राक्षसों को भी क़ाबू में कर सकता है ।

राजा जब गुस्सा करे तो उसकी तारीफ़ करने
े, जिनसे उनका प्रेम हो उनके साथ प्रेम करे,
सके दुश्मनों से दुश्मनी रक्खे, उसके दान की
शंसा करे, यह बिना मंत्र के वश में करने का तंत्र
। करटक बोला जो यह विचार है तो आपको
स्ता सुख देने वाला हो । अपनी इच्छा के अनुसार
र्ताव करो । तब वह उसको प्रणाम कर पिंगल के
ास को चल पड़ा । दमनक को आता हुआ देख कर
पिंगलक द्वारपाल से बोला कि दंडे को अलग करो ।
यह हमारे मंत्री का पुत्र सदा बिना रोक टोक के आने
वाला है, आने दो । यह हमसे दूसरे आसन का
अधिकारी है । वह बोला—आपकी जैसी आज्ञा ।
दमनक पास में जाकर पिंगल को प्रणाम करके
दूसरे आसन पर बैठ गया । पिंगलक नाख़ून रूप
वज्र के समान दाहने हाथ को दमनक के ऊपर रख

ा सत्कार किया जाता है, बड़े बड़े कामों में भी
सको नहीं लगाया जाता तो वह राजा को छोड़
ता है।

और जो वे समझी से अच्छे नौकरों को छोटे
टे दर्जों पर नियत करता है तो वे नौकर उस
ाजा के पास नहीं रहते और उसमें राजा का भी
(वे समझ होने से) कोई क़सूर नहीं, न उनका ही
क़सूर है।

सोने के गहनों में लगाने योग्य मणि को यदि
टे धातु के गहनों में लगा दिया जावे तो वह मणि
ह तो रोती है और न शोभा ही देती है, किन्तु
गाने वाले की वे समझी की लोग बुराई किया करते
।

और जो आप यह कहते हैं कि हमने तुमको
हुत दिनों में देखा, तो सो भी सुनो—

जिस स्थान में रहते और बांये हाथ में कुछ
र्क़ नहीं समझा जाता वहाँ, सब स्थानों में जाने
ाला बुद्धिमान् क्षणमात्र भी न ठहरेगा।

जो मनुष्य अपनी बुद्धि से काँच को मणि और
ाणि को काँच समझता है ऐसे के पास नौकर
ाम मात्र भी नहीं ठहरना चाहते।

कीड़ों से रेशम, पत्थर से सोना, गौ के रोम से
व, कीचड़ से कमल, समुद्र से चन्द्रमा, गोबर से
मल, लकड़ी से आग, साँप के फण से मणि और
पित्त से रोचन पैदा होता है। गुणी अपने गुण से
राहूर होते हैं, न कि जन्म से।

अपने घर में पैदा हुई नुक़सान करने वाली चुहिया
ा लोग मार डालते हैं और भलाई करने वाले बि-
ाव को, खाने की चीज़ें दे दे कर लोग पालते हैं।

जिस तरह चंड भिंड, आक और जल से लकड़ी
ा कुछ भी काम नहीं निकलता इसी तरह अज्ञान
ानुष्य से कोई काम नहीं बनता।

असमर्थ भक्त और अपकारी समर्थवान् पुरुषों से
या है? हे राजन्! मुझ भक्त और समर्थ का
ापको तिरस्कार नहीं करना चाहिए।

पिङ्गलक बोला—ख़ैर, समर्थ और असमर्थ की
या बात है। परन्तु तुम हमारे पुराने मन्त्री के लड़के
हो इसलिए निडर होकर कहो जो तुम कहना चाहते
हो। दमनक बोला—हे देव! कुछ कहना तो है।
पिङ्गलक बोला—जो कहना चाहते हो सो कहो।
उसने कहा—

बृहस्पति ने कहा है—राजा का जो बहुत छोटा

रने वाले मालिक से दुख कह देना सुखकारी
ाता है।

ऐ दमनक ? क्या तू दूर से बड़ी आवाज़ सुन
ेता है ? दमनक ने कहा, हाँ सुन लेता हूँ, सो
या। पिङ्गलक ने कहा—ऐ प्यारे ! मैं इस वन से
चले जाने की इच्छा करता हूँ। दमनक बोला—
क्यों ? पिङ्गलक ने जवाब दिया कि इस वन में कोई
अजीब जानवर आया है जिसकी यह बड़ी आवाज़
सुनाई देती है। आवाज़ की सी ही इसमें ताक़त
भी होगी। दमनक ने कहा—हे स्वामी ! यदि सिर्फ़
आवाज़ से ही डर मालूम हुआ है तो यह ठीक
नहीं; क्योंकि जिस प्रकार पुल जल से टूट जाता
है इसी तरह दुर्जनता से मंत्र (सलाह) भी नष्ट हो
जाता है। चुगुली से प्यार, घबराया आदमी सूखी
कथा से दुखी हो जाता है। इससे आप को खान-
दान से मिला हुआ वन त्यागना ठीक नहीं है।
क्योंकि तुरही, वेणु, सितार, ढोल आदि के शब्द
नाना प्रकार के हुआ करते हैं, इससे सिर्फ़ आवाज़
सुन कर ही डरना न चाहिए। जिस राजा का धीरज
डरावने दुश्मन के आ जाने पर नहीं जाता रहता
उसकी कभी हार नहीं होती।

विधाता के भी भय दिखलाने से धीरों का धीर-
नहीं जाता रहता, जिस तरह गरमी में छोटे छो
तालाव सूख जाते हैं पर समुद्र वढ़ा ही करता है।
विपत्ति के पड़ने पर जिसको दुख और सम्पि
के होने पर सुख, इसी तरह लड़ाई में जिसको उ
नहीं होता ऐसे तीनों लोकों के तिलक किसी विर
ही लड़के को मा पैदा करती है।
शक्ति की विकलता से नम्र हुए की, विना सा
होने से बहुत छोटे की, मान-रहित जन्मधारी की
और तिनके की, इनकी एक सी हालत होती है।
दूसरे के प्रताप को पाकर जो दृढ़ नहीं होता
ऐसे लाख की ज़ेवर की नाईं उसके रूप से क्या है।
ऐसा जान कर आप को धीरज रखना चाहिए।
सिर्फ़ आवाज़ सुन कर डरना न चाहिए।
मैंने पहले जाना था कि यह कुछ होगा पर पीं
समझ गया कि इसमें चमड़ा और लकड़ी ही है
पिङ्गलक बोला कि यह कैसे? उसने कहा—

१—गीदड़ की कहानी

एक गीदड़ वन में इधर उधर घूम रहा
वह वड़ा भूखा था। उसने दोनों सेना

संग्राम-भूमि देखी। उस जगह गिरे हुए ढोल की आवाज़ को, जो हवा ओर से बल्ली के लगने से उठती थी, सुनी। उससे डर कर सोचने लगा, आह ! मैं मरा। इस आवाज़ के सामने न जाकर, जल्दी दूसरी जगह चला जाऊँ, र एक साथ पुरखाओं के इस वन को छोड़ना भी क नहीं है। क्योंकि डर या ख़ुशी के मिलने पर जो चार किया करता है और काम जल्दी से नहीं रने लगता उसको पीछे पछताना नहीं पड़ता।

इसलिए, पहले मुझे जानना चाहिए कि यह आवाज़ सकी है ? धीरज धरके जब धीरे धीरे उसके स गया तो वहाँ ढोल पड़ा देखा और वह उसको ल समझ कर ख़ुद ही बजाने लगा। फिर बड़ी शी से सोचने लगा—अहो ! बहुत समय के बाद भोजन हमको मिला है, ज़रूर इसमें खाने की जें होंगी। सख़्त खाल से मढ़े हुए उस ढोल को ट कर और एक ओर छेद करके ख़ुशी होकर वह र घुस गया। लेकिन चमड़े के काटने से दाढ़ें गई थीं। तब हताश होकर सिर्फ़ लकड़ी ही कर कहने लगा कि मैंने पहले जाना था कि भरा हुआ होगा। इस तरह सिर्फ़ शब्द से

ही डरना नहीं चाहिए। पिंगलक ने कहा
देखो, यह मेरा सारा परिवार भय से घबराया
भागने की इच्छा कर रहा है; मैं धीरज कैसे ध
उसने कहा, हे मालिक! इनका कोई कसूर
नौकर तो स्वामी के समान हुआ करते हैं।

घोड़ा, शस्त्र, शास्त्र, वीणा, वाणी, नर
नारी; ये जैसे आदमी को पाते हैं वैसेही ये
और अयोग्य बन जाते हैं।

हिम्मत करके तुम तब तक यहीं रहो जब
मैं इस आवाज़ को मालूम कर आऊँ कि क्या
पीछे जैसा मुनासिब हो वैसा करना। पिंगलक
पूछा। क्या आप वहाँ जाना चाहते हैं? उसने क
मालिक के हुक्म से नौकर को काम और बे
का विचार ही क्या है? स्वामी की आज्ञा से अ
नौकर को कहीं भी कुछ डर नहीं होता।

जो नौकर अपने स्वामी की आज्ञा को सदा प
समझा करता है, ऐसे नौकर को, राजा लोगों वे
ऐश्वय चाहते हैं, सदा अपने पास रखना उचित
पिंगलक ने कहा— हे प्यारे! जो ऐसा है तो
आनन्द के साथ जाओ। दमनक उसको प्रणाम
संजीवक की जिस ओर से आवाज़ आई थी उसी

या। दमनक के चले जाने पर भय से घबरा र पिंगलक सोचने लगा। मैंने अच्छा नहीं किया जो इसका विश्वास कर इससे अपना भेद कह दिया। शायद यह दमनक दोनों श्रोर का बन कर मेरे ऊपर अधिकार से अलग किये जाने के कारण नाराज़ हो जावे।

जो राजा के पास रह कर पहले प्रतिष्ठा पाये हुए होते हैं उनकी पीछे प्रतिष्ठा न रहे तो चाहे वे अच्छे कुलीन भी हों तो भी उसके नाश करने के लिए कोशिश किया करते हैं। इससे तब तक इसकी इच्छा देखने को दूसरी जगह जाकर रहूँ। शायद दमनक उसको साथ लाकर मुझको मरवा डालने की इच्छा करे।

क़सम खाकर भी मेल चाहनेवाले दुश्मन का विश्वास न करे। देखो यक़ीन करने से ही राज्य के काम में लगे हुए शत्रु को इन्द्र ने मार डाला था। विश्वास के बिना तो देवता भी शत्रु को क़ाबू नहीं कर सकते। विश्वास से ही इन्द्र ने दिति के गर्भ का नाश कर दिया था।

ऐसा विचार कर वह दूसरी जगह जाकर बैठ और दमनक की बाट देखता रहा। दमनक भी

संजीवक के पास जाने पर उसको बैल जान
खुशी हुआ और विचारने लगा, आहा! यह
अच्छी बात हुई। इसके साथ उसका संधि-
हो जाने से पिंगलक मेरे वश में हो जावेगा।
राजा के ऊपर जब आपत्ति आती है तब
की बन पड़ती है, इस कारण मंत्री लोग राजा को
आपत्ति में ग्रसित रहने को ही अच्छा समझते हैं
जिस तरह निरोगी मनुष्य कभी हकीम की
नहीं करता इसी तरह आपत्ति-रहित राजा क
मन्त्री को नहीं चाहता। इस तरह सोच कर पिंगल
के पास गया। पिंगलक उसको अपने पास
हुआ देख कर पहले की तरह बैठा रहा।
पास जाकर और उसको प्रणाम करके बैठ गया
पिंगलक बोला, क्या आपने उस जीव को देखा है
दमनक ने उत्तर दिया कि क्या स्वामी के
झूठ कहा जाता है?
जो देवता और राजा के सामने थोड़ा भी झू
बोलता है वह बड़ा भी जल्दी नष्ट हो जाता है
मनु ने भी बतलाया है कि राजा में सब देव
निवास करते हैं, इस कारण उसको सदा देवत
के समान देखे, कभी दूसरी तरह से न समझे।

...देवमय राजा में यह विशेष (ख़ास) बात है कि
...राजा से बुरा और भला फल जल्दी मिलता है और
...देवताओं से जन्मान्तर में फल मिला करता है।

पिंगलक ने कहा, आपने सच ही देखा होगा।
...और दीनों के ऊपर बड़े .गुस्सा नहीं किया करते, इस
...कारण उसने तुझको नहीं मारा। क्योंकि—

...हवा नीचे को झुकी हुई कोमल डालियों को
...अपने झोंके से नहीं तोड़ा करती, किन्तु बड़ों का
...यह स्वभाव ही हुआ करता है कि वे बड़ों को ही
...अपना पराक्रम दिखलाते हैं।

...मद के जल वाले, गंडस्थलों में प्रीति करने
...वाले, मतवाले, भ्रमण करते हुए मस्त भौंरों के पैरों से
...सताया हुआ भी महाबली हाथी उन पर .गुस्सा
...नहीं करता। कारण यही है कि बलवान् बराबर
...बल वाले के साथ ही .गुस्सा किया करते हैं।

दमनक ने कहा—यही हो, क्योंकि यह महात्मा
...और हम दीन हैं। तो भी यदि आप कहें तो आप
...की सेवा में उसे लगा दूँ। पिंगलक विश्वास करके
...बोला, क्या तुम यह कर सकते हो? दमनक
...जवाब दिया—बुद्धि के सामने क्या मुश्किल
...! क्योंकि काम जैसा बुद्धि से बन सकता है

पृथिवी, समुद्र और पर्वत का भी अन्त मनुष्य सकते हैं पर राजा के दिल की बात का अन्त भी किसी ने नहीं पाया।

तब तक तुम यहीं रहो जब तक मैं समय देख र मुझको यहाँ ले आऊँ। इसके बाद दमनक पिंगलक के पास आकर कहा, स्वामिन्! यह प्रबल जीव नहीं है किन्तु शिवजी का वाहनभूत पम (शिव की सवारी बैल) है। मेरे पूछने पर मुझसे उसने कहा है कि शिवजी ने प्रसन्न होकर यमुना के किनारे के देशों में नये नये तिनके खाने की मुझको आज्ञा दी है, बहुत कहने से क्या है, भगवान् शिव ने मुझको यह वन खेलने कूदने के लिए दिया है। पिंगलक डरता हुआ बोला, अब मैंने सच सच जान लिया। देवता की प्रसन्नता के बिना साँप आदि भयावने जन्तु जिसमें रहते हों, ऐसे वन में घास खाने वाले निडर होकर गर्जते हुए घूमते फिरते हैं, सो तू ने क्या कहा है? स्वामिन्! मैंने यह कहा कि यह वन चण्डिका के वाहनभूत (काली की सवारी) हमारे स्वामी पिंगलक नाम वाले सिंह के अधिकार में है। आप पाहुने हैं, उस स्वामी के पास चलो और भाई की तरह प्यार से

हो संजीवक के पास आकर बड़ो नम्रता से बोला
कि—हे मित्र ! आपके लिए मैंने स्वामी से अभय-
दान देने की प्रार्थना की है।
आप निर्भय हो, चलिए। पर तुमको, राजा
का प्रसाद पाने पर मेरे साथ नियम से बर्त्तना
चाहिए, घमण्डी होकर अपनी प्रभुता से न विचरना
और मैं भी तुम्हारे इशारे से संपूर्ण राज्य का भार
मंत्री बन कर धारण करूँगा। ऐसा करने से हम
दोनों राज्य की लक्ष्मी का अच्छे प्रकार भोग
करेंगे।

संजीवक ने कहा—ऐसाही सही। जैसा तुमने कहा
वैसा ही मैं करूँगा। इस प्रकार कहने पर दमनक
उसको साथ लेकर पिङ्गलक के पास गया और बोला
देव ! मैं संजीवक को ले आया। अब आप ही
मालिक हैं। संजीवक पिङ्गलक को आदरपूर्वक
प्रणाम कर आगे बैठ गया। पिङ्गलक उसके मज़-
बूत और बड़े कंधे पर दाहिना हाथ रख कर आदर
से बोला। आप कुशलपूर्वक हैं ? इस निर्जन-वन
में कहाँ से आये ? तब उसने अपना हाल बतलाया
कि जिस प्रकार वर्धमान के साथ से वियोग हुआ
सब कह सुनाया। संजीवक का सारा हाल सुन कर

...री आपस में सम्मति करते थे, बाकी जानवर ...लग बैठे रहते थे। करटक और दमनक तक ...हां न आने पाते थे। और भी सिंह के पराक्रम न ...करने से सब जानवर और वे दोनों गीदड़ भूख रूपी ...ग से दुखी हुए एक ओर को चले गये।

नौकर लोग फलहीन कुलीन और उन्नति-कर्त्ता ...राजा को छोड़ कर दूसरी जगह चले जाते हैं। ...सूखे वृक्ष को छोड़ कर पक्षी दूसरी जगह चले ...जाते हैं।

अब स्वामी के प्रसाद के बिना भूख से कमज़ोर हुए करटक और दमनक आपस में सलाह करने लगे। दमनक ने कहा, आर्य करटक! हम तो अब मामूली समझे जाने लगे और यह पिङ्गलक संजीवक में अनुरक्त होकर अपने काम से विमुख हुआ। कुटुम्बी भी चले गये। अब क्या करें? करटक ने कहा, यद्यपि यह आप का कहना नहीं मानता तो भी अपने काम के लिए स्वामी से कहना ही उचित है। क्यों कि मंत्रियों का काम है कि अपने राजा को अवश्य समझावें, चाहे वह बात न सुने। जिस तरह विदुर ने अपने दोष को दूर करने के लिए धृतराष्ट्र के पुत्र को समझाया था। ...कि मद

ए। उपाय करने पर भी काम न बने तो सोचना
ए कि इसमें क्या कमी रह गई।

ऐसा विचार कर अपनी बुद्धि के प्रभाव से उन
ों को अलग अलग कर दूँगा और वे दोनों जानने
न पावेंगे।

करटक बोला, प्यारे! तुम्हारा कहना तो ठीक
और भी मुझको बड़ा डर है, क्योंकि संजीवक
द्धमान् और सिंह बड़ा भयानक है। यद्यपि तेरी
द्धि तेज़ है तो भी पिंगलक से उसको अलग कर
ना मुश्किल है। दमनक ने कहा, भाई, मैं असमर्थ
ने पर भी समर्थ हूँ। क्योंकि उपाय से जो हो
कता है वह पराक्रम से नहीं। एक कौवी ने सोने
धागे से काले साँप को मरवा डाला था। करटक
कहा, यह कैसे? उसने कहा—

—कौआ और काले साँप की कहानी

किसी जगह एक बड़े बर्गद के वृक्ष पर कौआ
र कौवी रहते थे। कौवी जब बच्चा देती तभी उस
क्ष की खोखल में रहने वाला काला साँप बच्चे को
ा जाता था। एक समय वे दोनों अत्यन्त दुखी
ाकर दूसरे वृक्ष की जड़ में रहने वाले अपने मित्र

हाते हुए राजा के एक मनुष्य को देखा और वह
स ज़ंजीर को लेकर अपने घर की ओर उड़ी। तब
ह राजा का आदमी उसे ले जाता हुआ देख, हाथ
लाठी ले, बहुत जल्दी उसके पीछे दौड़ा। कवी
स ज़ंजीर को काले साँप की खोखल में डाल कर
र भाग गई। राजा के मनुष्य ने उस खोखल को
खा तो उसमें फन फैलाये हुए एक काला साँप
ठा है। उसको लाठी से मार और अपना ज़ेवर ले
र घर को चला गया। कौआ कौवी भी बड़े सुख से
हने लगे। उपाय से सब कुछ हो सकता है बुद्धि-
नों को कुछ भी असाध्य नहीं। जिसमें बुद्धि होती
उसी को बल होता है, निर्बुद्धि को बल नहीं होता।
। वन में मद से मस्त हुए सिंह को ख़रगोश ने
डाला था। करटक ने कहा, कैसे? वह बोला—

—सिंह और ख़रगोश की कहानी

किसी वन में एक भासुरक नाम सिंह रहता
वह अपनी बहादुरी से अनेक जानवरों को
कर भी शान्त न होता था। तब वन के जानवर
दिन इकट्ठे हो, कहने लगे। हे स्वामिन्! इन
रों के मारने से क्या मतलब है? तुम्हारा तो

पेट एक ही जानवर से रोज़ भर सकता है। ए
प्रतिज्ञा करो तो सिलसिले वार हम एक जान
रोज़ तुम्हारे पास पहुँचा दिया करें। ऐसा
से तुमको तकलीफ़ भी न होगी और हम सब
न मारे जायँगे, राजा के इस धर्म को मानो।

हे राजा ! जो धीरे धीरे बल के अनुसा
खाता है वह बुद्धिमान् रसायन की नाईं मज़
होता है।

अच्छी विधि से जोती हुई कठिन भूमि भी
बहुत फल देने वाली होती है, जैसे अरणी, लकड़
के मथने से आग देती है।

प्रजा का पालन करना राजा की प्रशंसा का
काम है, यही स्वर्ग के कोष (ख़ज़ाना) का बढ़ाना
है। प्रजा को सताने से धर्म का नाश और संसार
में अपकीर्ति होती है।

गोपाल रूप राजा को प्रजा रूप गौ का दूध धीरे
धीरे ग्रहण करना चाहिए। राजा प्रजा का पालन
पोषण करता हुआ न्याय की वृत्ति करे।

जो राजा मोह से बकरी की नाईं प्रजा को
कष्ट देता है उस की एक ही तृप्ति होती है, दूसरी
नहीं।

फल की इच्छा करने वाला राजा यत्न से लोक रक्षा करे। जिस तरह माली दान और मान के ल से अंकुरों को बढ़ाता है।

जैसे समय पर गौ दुही जाती है वैसे ही पाली प्रजा भी समय पर दुही जाती है। सींची लता ही समय पर फूल-फल देती है।

जिस प्रकार छोटे छोटे बीजों के अंकुर यत्न से रक्षा करने पर समय पा कर फल देते हैं, इसी तरह रक्षा किये हुए को लोक भी फल देते हैं।

सोना, अन्न, रत्न, नाना प्रकार के यान और भी जो कुछ चीज़ें हैं वह सभी राजा को प्रजा से ही मिला करती हैं।

लोगों पर कृपा करने वाले राजा की तरक्क़ी होती है और लोगों को सताने से राजा का सर्वनाश हो जाना है, इसमें सन्देह कुछ भी नहीं है।

उन जानवरों के इस प्रकार वचन सुन कर भासुरक बोला, अहो! तुम ठीक कहते हो। परन्तु अगर बैठे हुए मेरे पास रोज़ एक जानवर न आ जाया करेगा तो सबको खा जाऊँगा। 'हम ऐसा ही करेंगे' ऐसी प्रतिज्ञा करके सब जानवर निडर हो, उस वन में फिरने लगे। भासुरक के पास रोज़ एक

जानवर बूढ़ा, वैरागी, शोक में डूबा हुआ, या
पुत्रादि के नाश से डरा हुआ जाया करता था।
दिन एक ख़रगोश की बारी आई। वह
के कहने पर भी विना ही इच्छा के गया और
में उसके मारने का भी उपाय सोचता गया।
चलते रास्ते में एक कुआँ दिखलाई दिया,
किनारे खड़ा होकर अपनी परछाहीं देखने लगा।
मन में विचार किया कि सिंह को क्रोधित
इसी में गिरा कर मारूँगा।

वह समय विता कर धीरे धीरे चलता हुआ
को सिंह के पास पहुँच, हाथ जोड़ कर
लगा। वक़्त पर न पहुँचने से सिंह भूख के मारे
राया हुआ सो रहा था, मन में कह रहा था
होते ही इस वन को निर्जीव कर दूँगा।
को देखते ही घुड़क कर बोला, रे ख़रगोश!
तू छोटा है, तिस पर भी समय विता कर आ
इस कारण तुझे मार कर सवेरे सब
मार डालूँगा। तब ख़रगोश विनय के साथ
सुनिए! इसमें न मेरा क़सूर है और न दूसरे
वरों का। सिंह ने कहा, जल्दी बतलाओ, क्या
है? उसने कहा, स्वामिन्! सब जानवरों ने

गिर कर मर गया। ख़रगोश भी प्रसन्न-मन हो, सब जीवों को आनन्दित करता हुआ उस वन में रहने लगा। इसीसे मैंने कहा था कि जिसको बुद्धि होती है उसी को बल होता है।

सो यदि आप कहें तो मैं वहाँ जाकर अपनी बुद्धि के प्रभाव से उनकी मित्रता छुटा दूँ। करटक ने कहा, प्यारे! यदि ऐसा है तो जाओ, रास्ता तुमको कल्याणकारी हो, अपनी इच्छा से काम करो। तब दमनक संजीवक से अलग पिंगलक को देख कर उसी समय प्रणाम कर आगे बैठ गया। पिंगलक उससे बोला, प्यारे! बहुत दिन में दिखलाई दिये? दमनक ने कहा, श्रीमान् को हमसे कोई काम नहीं पड़ता इसीसे मैं आता भी नहीं। तो भी राज-प्रयोजन का नाश देख कर डरता हुआ खुद ही कहने को आया हूँ।

जिसकी बुराई न चाहे उससे विना ही पूछे बुरी हो या भली हित की बात ज़रूर कह देवे।

तब उसके मतलब को जानकर पिंगलक बोला, तुम क्या कहना चाहते हो? अपना मतलब कहो। उसने कहा—देव! संजीवक आपके साथ वैर-बुद्धि रखता है। यह विश्वास के कारण एकान्त में मुझसे

उसने कहा है कि "हे दमनक ! मैंने इस पिंगलक राजा की सार-असारता देख ली। इसी कारण मैं इसको मार कर सब जानवरों का आधिपत्य तुझे देकर मन्त्री बनाऊँगा" पिंगलक इन वज्रपात के समान बुरे वचनों को सुन कर मोह में भर गया और कुछ कह न सका। दमनक उसकी सूरत देख सोचने लगा कि यह तो संजीवक के साथ अनुराग करता है, सो अवश्य इस मन्त्री से राजा का नाश होगा।

जिस समय राजा अपने राज्य में एक ही मन्त्री का प्रमाण मानता है तब मन्त्री को मोह से घमंड हो जाता है, घमंड के कारण दास्यभाव से दुःख होना है, और दुःख को प्राप्त हुए मनुष्य के मन में स्वतन्त्र होने की इच्छा हुआ करती है। स्वतन्त्रता की इच्छा राजा के प्राणों तक की ग्राहक हो जाती है। यहाँ क्या करना चाहिए? पिंगलक उससे कहने लगा—हे दमनक ! संजीवक तो मेरा प्राणों के समान प्यारा नौकर है; वह क्योंकर मुझसे द्रोह-बुद्धि रखता होगा? दमनक ने कहा, देव ! नौकर सदा नौकर नहीं रह सकता क्योंकि—

संसार भर में ऐसा कोई मनुष्य नहीं जो लक्ष्मी

सभा में एक बार जिसके लिए यह कहा हो कि "यह गुणवान है" उसके लिए प्रतिज्ञा को तोड़ कर डरने वाले को उसके दोष बतलाने ठीक नहीं। मैंने तो तेरे कहने पर इसको अभय दिया है, फिर इसको मैं किस तरह मारूँ? यह संजीवक सब तरह हमारा दोस्त है, हमारा किसी प्रकार का उसके साथ क्रोध नहीं है।

जो उपकार करने वालों के साथ उपकार करता है तो उसके उपकारीपन में क्या गुण है? जो अपकार करने वालों के साथ भलाई करता है, अच्छे पुरुषों ने उसी को अच्छा बतलाया है। इसी कारण द्रोह-बुद्धि रखने वाले इसके साथ कोई बुराई नहीं करूँगा। दमनक ने कहा, हे स्वामी! यह राजा का धर्म नहीं है कि द्रोह-बुद्धि वाले को क्षमा किया जावे।

बराबर धन वाले, बराबर सामर्थ्य वाले, मर्म जानने वाले, उद्योग करने वाले और आधा राज्य हर लेने वाले नौकर को जो नहीं मारता है, वह स्वयं मारा जाता है।

आपने तो इसकी मित्रता से सब राज-धर्म को छोड़ ही दिया है। राज धर्म के न रहने से सब लोग विरक्त हो गये हैं। यह संजीवक घास का खाने

घाला और आप तथा आपके कुटुम्बी मांस-भक्षी हैं। तुम तो अब उद्योग करते हो नहीं तो उनको मांस खाने को कहां से मिले? इसी कारण वे तुमको छोड़ कर चले गये और तुम नष्ट हुए। इसकी सुहबत में रहने से शिकार करने की तुम्हारी कभी इच्छा न होगी।

जिसके पास जैसे नौकर रहते हैं या जो जैसे नौकरों की परवरिश करता है वह पुरुष वैसा ही हो जाता है, इसमें कोई शक नहीं है।

तपे हुए लोहे पर पड़े हुए जल का नाम तक नहीं रहता। वही जल कमल के पत्ते पर मोती के समान मालूम होता है। स्वाति-नक्षत्र में सागर के बीच में सीपी में पड़ कर वही जल मोती बन जाता है। प्रायः संगति से ही उत्तम, मध्यम और निकृष्ट गुण हुआ करते हैं।

बुरे आदमियों की संगति से महात्माओं की भी चित्त की वृत्ति बदल जाती है। दुर्योधन की संगति से भीष्म गोहरण के लिए चले गये। इसी कारण अच्छे मनुष्य बुरों की संगति नहीं करते।

जिसने अपने लोगों को छोड़ कर बाहर के मनुष्यों का साथ किया है वह ककुद्रुम राजा की तरह

नष्ट हो जाता है। पिङ्गलक ने कहा किस प्रकार? दमनक ने कहा—

५—चंडरव गीदड़ की कहानी

किसी वन के निकट चंडरव नाम का एक गीदड़ रहता था। वह एक दिन भूख से अत्यन्त व्याकुल हुआ शहर में घुस गया। शहर के कुत्ते उसको देखते ही भौंक कर उसके पीछे दौड़े और तेज़ दाढ़ों से उसे काटने लगे। वह कुत्तों से सताया हुआ प्राणों के भय से पास ही एक धोबी के घर में चला गया। धोबी के घर में नील के रस से भरी हुई एक नाँद रक्खी थी, उसमें वह घबरा कर गिर गया। जब वह उसमें से निकला तब उसका रंग नीला हो गया। कुत्तों ने समझा कि यह तो गीदड़ नहीं है बल्कि और कोई जानवर है। ऐसा समझ कर वे भाग गये। नीला रंग कभी दूर नहीं होता। चंडरव वहाँ से चल कर एक वन में पहुँचा। वन-वासी जीव उसको अजीब जान कर इधर उधर भागने लगे कि नहीं मालूम यह कैसा बहादुर जानवर है।

जिसकी बहादुरी और कुल न जाना हो उसका,

अपनी भलाई चाहने वाला कभी विश्वास न करे।

चंडरव भी उनको घबराया हुआ समझ कर बोला—ऐ जानवरो! तुम मुझको देख कर भय से इधर उधर क्यों भागे जाते हो? डरो मत। ब्रह्मा ने आज स्वयं मेरा निर्माण कर कहा है कि वन-जीवों का कोई आजकल राजा नहीं है इसलिए आज से तुझको मैंने जीवों का राजा बनाया और तेरा नाम ककुद्रम रक्खा। पृथिवी पर जाकर तू सब की पालना कर। मैं इसी कारण आया हूँ। अब से मेरी छत्र-छाया में वन के सब जीवों को बर्तना चाहिए। मैं त्रिलोकी का मालिक हूँ। यह सुन शेर आदि सब जीव कहने लगे कि हे स्वामिन्! आज्ञा दीजिए। तब उसने सिंह को तो अमात्य मंत्री की पदवी दी। व्याघ्र को खाट का रखवाला बनाया, गैंड़ों को पान लगाना बतला दिया, भेड़िये को ड्योढ़ीवान बनाया, और जो अपनी जाति के गीदड़ थे उनसे तो बात चीत भी न करता था। तब गीदड़ तो उस समुदाय से निकाल दिये गये और बाक़ी सिंह आदि, जानवरों को मार कर लाते और उसके सामने डाल देते

थे। यह भी प्रभु-धर्म से उन सब को बाँट देता था।

कुछ समय के बाद बड़ी दूर चिल्लाते हुए एक गीदड़ की उसने आवाज़ सुनी। आवाज़ को सुनते ही वह बड़े ज़ोर से खुद भी चिल्लाने लगा। वे सिंह आदि उसकी आवाज़ से उसको गीदड़ जान कर लज्जित हो, आपस में कहने लगे कि ओ हो! यह तो गीदड़ है। इस नीच ने हमको ठग लिया है, इसको मार डालो। उसने यह सुन कर भागने के बहुत उपाय किये पर होना क्या था, उन्होंने उसको वहीं पर मार डाला।

यह सुन पिङ्गलक बोला, ऐ दमनक! इसका क्या सबूत है कि वह मेरे साथ दुष्ट-बुद्धि रखता है। वह बोला कि आज ही उसने मेरे सामने निश्चय किया है कि सवेरे पिङ्गलक को मारूँगा, यही इसमें सबूत है। सवेरे आपके पास आने के समय लाल मुँह और नेत्र किये, होंटों को फड़-फड़ाता हुआ, इधर उधर देख कर, अनुचित स्थान में बैठ कर आपको बुरी नज़र से देखेगा। ऐसा समझ कर, जो उचित हो सो करो। यह कह, संजीवक के पास चला गया और उसको प्रणाम कर

के पास वैठ गया। संजीवक भी उद्वेग से आते हुए उसको देख कर आदर से वोला, ऐ मित्र ! बहुत दिन में दिखलाई दिये, आनन्द में हो।

संसार में वही मनुष्य धन्य हैं, वही विवेकी और वही सभ्य हैं, जिनके यहाँ किसी काम के लिए दोस्त नित्य आया करते हैं।

दमनक ने कहा, सेवकों का कुशल कहाँ ? जो राजा के सेवक होते हैं उनकी संपत्ति दूसरे के अधीन, चित्त अशान्त और जीने में भी उनको अविश्वास रहता है। सेवा से धन की इच्छा करने वालों ने जो किया है सो देखो कि शरीर की जो स्वतंत्रता थी उसको भी मूर्खों ने नष्ट कर दिया। महाभारत में बतलाया है कि ये पाँच जीते हुए भी मरे के समान है १—दरिद्री २—रोगी ३—मूर्ख ४—नित्य दूसरों की सेवा करने वाला और ५—निन्दक।

संजीवक ने कहा—तो तुम क्या कहना चाहते हो वह बोला, मित्र ! मंत्रियों को मंत्र-भेद करना मुनासिब नहीं है क्योंकि जो मंत्री की पदवी में रहता हुआ मंत्री मंत्र—भेद कर दे तो वह राजा का कार्य बिगाड़ कर ख़ुद नरक को जाता है। जिस मंत्री ने राजा का

मंत्र-भेद कर दिया है मानों उसने राजा को बिना ही शस्त्र के मार डाला यह नारद का कहना है।

तो भी मैंने तुम्हारा स्नेही होने से मंत्र-भेद किया है क्योंकि तुम मेरे ही कहने से इस राजकुल में प्रविष्ट हुए हो।

जिसके विश्वास से कोई किसी प्रकार मृत्यु को प्राप्त होता है उसकी हत्या उसी को लगती है, यह मनुजी ने बतलाया है।

तुम्हारे साथ यह पिंगलक बुरा ख्याल रखता है। आज इसने मेरे आगे कहा था कि संजीवक को मार कर सब जानवरों को बहुत काल तक के लिए तृप्त करूँगा। तब उससे मैंने कहा, स्वामिन्! यह बात ठीक नहीं, मित्रद्रोह न करना चाहिए। क्योंकि ब्रह्महत्या करके तो उसके योग्य विशेष अनुष्ठान का प्रायश्चित्त करने से शुद्ध हो जाता है, पर मित्रद्रोही किसी प्रकार शुद्ध नहीं होता। तब क्रोध में भर कर उसने मुझसे कहा कि हे दुष्टबुद्धि! संजीवक तो घास खाने वाला है और हम मांस खाने वाले। हमारा तो उससे स्वाभाविक वैर है, दुश्मन की लापरवाई क्यों करें? इसी लिए साम आदि उपायों से मारते हैं, इसके मारने में दोष नहीं होता।

युद्ध करने के तैयार हुआ शूर वीर, युद्ध में मारने योग्य और न मारने योग्य का विचार न करे। देखो पूर्वकाल में द्रोणाचार्य्य के पुत्र अश्वत्थामा ने सोते हुए धृष्टद्युम्न को मार डाला था।

इसीलिए मैं यह सब निश्चय करके तुम्हारे पास आया हूँ। अब मेरे विश्वासघात का कोई दोष नहीं। यह गुप्त सलाह तुम्हारे आगे निवेदन कर दी। आगे तुमको जो अच्छा लगे करो। तब संजीवक वज्रपात के समान उसका यह वचन सुनकर मूर्छित हो गया।

जब संजीवक को होश आया तब बोला—अरे! यह ठीक कहा है कि राजा स्नेह-रहित होता है, धन कंजूस के ही पास रहा करता है और मेघ प्रायः पर्वत और क़िले पर ही वर्षा करते हैं।

'मैं ही राजा का माना हुआ हूँ' जो मूर्ख इस तरह समझता है, वह सींग के बिना पशु के बराबर है।

मनुष्यों को वन में रहना अच्छा, भीख माँग कर खाना अच्छा, बोझा उठाकर जीना अच्छा, और व्याधि भी अच्छी, पर सेवा करके संपत्ति का प्राप्त करना अच्छा नहीं। मैंने बड़ा बुरा किया जो इसके साथ मित्रता की। क्योंकि जिनका समान

धन और समान कुल हो उन्हीं की मित्रता तथा विवाह होने योग्य होते हैं, ज़ोरावर और कमज़ोरों में मित्रता और विवाह ठीक नहीं होते। मृग मृगों के साथ रहते हैं, गौ, गौवों के साथ, घोड़े, घोड़ों के साथ, मूर्ख, मूर्खों के साथ, बुद्धिमान, बुद्धिमानों के साथ रहते हैं क्योंकि मैत्री अपने बराबर स्वभाव और व्यसन वालों की ही होती है। इस कारण यदि मैं उसको जाकर प्रसन्न भी करूँगा तो भी वह प्रसन्न न होगा। क्योंकि जो मनुष्य किसी कारण से गुस्सा करता है वह उस कारण के न रहने पर निश्चय शान्त हो जाता है और जो बिना ही कारण के द्वेष करता है उसको कोई किसी प्रकार भी प्रसन्न नहीं कर सकता।

मैंने जान लिया कि प्रसन्नता न सहने वाले, पास के रहने वालों ने इस पिङ्गलक को मेरे ऊपर क्रुद्ध कर दिया है, इसी से यह मुझ निर्दोषी को इस प्रकार कहता है।

दमनक बोला हे मित्र! जो ऐसा है तो तुमको भय नहीं करना चाहिए। दुर्जनों से क्रुद्ध कराया हुआ भी यह तुम्हारी वचन-रचना से प्रसन्न हो जायगा। यह बोला, यह तुमने ठीक नहीं कहा, छोटे

दुर्जनों के साथ भी नहीं रहा जाता, वे कोई न कोई उपाय करके मार ही देते हैं।

इस कारण मनुष्य को उनसे बचना चाहिए। यह सुन कर संजीवक फिर उस से पूंछने लगा, मित्रवर! मैं कैसे जानूं कि यह दुष्ट-बुद्धि है। इतना समय हुआ हमने सदा प्रेम बढ़ते ही पाया, कभी कमी नहीं देखी। अस्तु, अब बतलाओ कि अपनी रक्षा के लिए उसके मारने का क्या उपाय करूँ! दमनक बोला, भद्र! मैं क्या जानूं? यह तुम्हारा विश्वास है जो लाल आँखे, टेढ़ी भौंहें किये और जीभ चाटता हुआ तुमको दिखाई दे उसे जानना कि वह दुष्ट-बुद्धि है, नहीं तो प्रसन्न जानना। मुझे आज्ञा दो कि मैं अपने घर जाऊँ। मेरी यह राय किसी को मालूम न हो, इस का ख़याल रखना। यदि रात के समय जाने में समर्थ हो तो इस देश को छोड़ दो।

इतना कह कर दमनक करटक के पास गया। उसको आता देख कर करटक बोला, भद्र! आपने क्या किया? दमनक ने कहा कि मैंने तो नीति का बीज बो दिया है, आगे करना दैव के अधीन है क्योंकि—

दैव के उलटा होने पर भी बुद्धिमान् को उपाय

करना चाहिए जिस से अपने दोष का नाश हो जावे और चित्त की रुकावट हो।

उद्योग करने में जो पुरुष-सिंह होते हैं उनको लक्ष्मी मिलती है, "दैव देता है" यह काहिल कहा करते हैं। दैव को छोड़ कर अपने भर सक पुरुषार्थ करो। यत्न करने पर भी यदि काम न बने तो सोचना चाहिए कि इस में कमी क्या रह गई।

करटक ने कहा, बतलाइए तो आपने किस तरह नीति का बीज बोया? उसने कहा, मैंने उन दोनों में मिथ्या उक्तियों से इस प्रकार भेद कराया है कि फिर तुम उन दोनों को एक स्थान में सलाह करते हुए न पाओगे।

करटक ने कहा, अहो! आपने अच्छा नहीं किया जो कि आपस में प्यार के कारण कोमल हृदय वाले सुख में रहने वालों को शोक-सागर में डाल दिया।

जो पुरुष परस्पर मेल रखने वाले और सुख में रहने वालों को दुःख के रास्ते पर ले जाता है वह जन्मजन्मान्तर में दुःखी रहता है इसमें संदेह नहीं। और जो तू भेदमात्र से ही संतुष्ट है सो भी ठीक नहीं, क्योंकि तू सब का अपकार करना जानता है, उपकार नहीं। कहा है—

नीच मनुष्य दूसरे के काम को बिगाड़ना ही जानता है, बनाना नहीं, जिस तरह वायु की शक्ति वृक्ष के उखाड़ने की होती है जमाने की नहीं।

दमनक ने कहा, आप नीति-शास्त्र को नहीं जानते इस कारण ऐसा कहते हैं। कहा गया है कि—

पैदा होतेही जो रोग और शत्रुको दबा नहीं लेता वह बड़ा बली भी उसके साथ बढ़ कर नष्ट हो जाता है।

पहले मैं उदासीनता से अभय दान देकर उस को लाया था, उसने पहले मुझे ही मंत्री के पद से अलहदा किया। यह सच कहा है—

यदि अच्छा मनुष्य अपनी जगह दुर्जन को प्रवेश करा देता है तो वह उसके स्थान की खुद इच्छा करता हुआ उसके नाश की तदबीर सोचा करता है, इसलिए बुद्धिमान् को चाहिए कि ऐसी जगह दुर्जन का प्रवेश न होने दे।

इस कारण मैंने उसके लिए यह मारने का उपाय रचा है, या देश छोड़ना होगा। यह भेद तुम्हारे सिवा और कोई न जानेगा, यह ठीक ही है। यह अपने मतलब के लिए ही किया गया है, क्योंकि—

हृदय को कठिन और वाणी को छुरे के समान बनाकर बिना विचारे अपकारी को मारना चाहिए

और, मर कर भी यह हमारा भोज्य होगा। एक तो बैर साधन, दूसरा मंत्रि पद का प्राप्त होना और तीसरे तृप्ति का होना इन तीन गुणों के होते हुए मूर्खता से तू मुझे क्यों दोषी बनाता है?

तब दमनक के जाने से संजीवक विचारने लगा, अहो! यह मैंने क्या किया जो मैं घास खाने वाला इस मांसभोजी का साथी हुआ।

अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, मेरी शान्ति कैसे होगी। या उसी पिङ्गलक के पास जाऊँ, शायद शरण में आये हुए की रक्षा करे और न मारे।

ऐसा निश्चय कर के, उदास हो, संजीवक धीरे धीरे आ कर सिंह का सहारा देखता हुआ यह कहने लगा—

जिस घर के अन्दर सांप रहता है, जिस वन में सिंह आदि हिंसक जीव रहते हैं, जिस दरिया में मनोहर खिले हुए कमल हैं और उसमें नाके आदि रहते हैं, अनेक दुष्ट जन, असत्य वचनों में लगे हुए बुरे मनुष्य, जिस राजा के पास रहते हैं, उसके पास अच्छे मनुष्य, डरते हुए जाया करते हैं।

इस तरह कहता हुआ, दमनक के कहे हुए की तरह पिङ्गलक को देख देख कर अचम्भे से शरीर को

संभाले हुए बिना ही प्रणाम किये दूर बैठ गया। पिङ्गलक भी इस हालत में उसको देख और दमनक के कहने को सच मान कर गुस्से में भर कर एक साथ उसके ऊपर टूट पड़ा। तब संजीवक की पीठ उसके तीखे नाख़ूनों से फट गई। फिर भी वह सींगों से उसके पेट में चोट करता हुआ किसी तरह उस से अलग हो गया। और फिर सींगों से मारने की इच्छा करता हुआ लड़ने के लिए मुस्तैद हो गया। जब ये दोनों ही फूले हुए ढाक की तरह आपस में लड़ने की इच्छा करने लगे। तब दोनों को ऐसी हालत में देख कर करटक दमनक से बोला, हे मूर्ख! तूने अच्छा नहीं किया जो इन दोनों को आपस में लड़ा दिया। तू नीति के सार को नहीं जानता, नीति जानने वालों ने कहा है—

जो काम बड़ी सज़ा देने से, बड़े साहस के करने से सिद्ध होने वाले, और बड़ी तकलीफ़ से होने वाले होते हैं, नीति के जानने वाले मंत्री उन कामों को प्रीति तथा साम उपाय से ही पूरा किया करते हैं। और जो अन्याय तथा लड़ाई से थोड़े फल की इच्छा करते हैं उन बुरी चेष्टा वाले राजाओं की लक्ष्मी के के रहने का संदेह हुआ करता है।

सो यदि इस लड़ाई में स्वामी का ही नाश हो गया तो तेरी सलाह किस काम की हुई ? और यदि संजीवक न मरा तो भी अच्छा नहीं है, जोकि तू प्राणों के संदेह में उसको मारना है। मूर्ख ! तू किस तरह मंत्री होना चाहता है ? तू साम दंड के नहीं जानता, जो दंड की इच्छा करके यह तेरा मनोरथ है सो फ़िज़ूल है क्योंकि—

साम से लेकर दंड तक ब्रह्मा ने नीति कही है, उसमें दंड अच्छा नहीं है, इससे दंड पीछे देना चाहिए।

बुद्धिमान् को पहले साम उपाय करना चाहिए, साम से किये गये कामों में कभी हानि नहीं होती।

जो तू मंत्री होने की इच्छा करता है सो भी ठीक नहीं क्योंकि तू मंत्री के कर्तव्य-कामों के नहीं जानता।

नीच मनुष्य दूसरे का काम बिगाड़ना ही जाना करता है बनाना नहीं, चूहा अन्न की पिटारी को गिराना ही जानना है उठाना नहीं।

इसमें सिर्फ़ तुम्हारा ही क़सूर नहीं है बल्कि स्वामी का भी है जिसने तुम्हारे कहने का विश्वास कर लिया है।

जिस राजा के पास नीच मनुष्य रहते हैं, वे राजा

अच्छे मनुष्यों के बताये रास्ते पर नहीं चलते; इसी से वे आपत्ति के कुमार्ग पर जाया करते हैं।

यदि तू मंत्री भी हो गया तो अच्छा पुरुष तो कोई इसके पास आवेगा ही नहीं क्योंकि—

राजा चाहे जैसा गुणी हो पर वह बुरे मंत्री से घिरा हुआ हो तो कोई मनुष्य उसके पास नहीं जाता; जिस तरह तालाब का पानी मीठा होने पर भी यदि उस में मगर रहता है तो उस पर कोई जाना पसंद नहीं किया करता।

और जिस राजा के पास अच्छे मनुष्य नहीं होते तो उसका भी नाश ही हो जाता है।

जो राजा चित्रविचित्र कथाओं के सुनने का शौक़ीन हो, धनुष न चढ़ाता हो और राजकाज न करता हो तो शत्रु उसकी लक्ष्मी से आनन्द उठाया करते हैं।

मूर्ख को उपदेश करने से क्या फल है? केवल गुस्सा ही बढ़ाना है, गुण नहीं।

मूर्खों को उपदेश करना उनके गुस्से को बढ़ाना है। सांपों को दूध पिलाना केवल विष बढ़ाना ही है।

ऐसे वैसे मनुष्य को उपदेश न देना चाहिए।

देखो एक मूर्ख बन्दर ने एक अच्छे गृहस्थ के घर को नष्ट कर दिया था।

दमनक ने कहा, किस प्रकार? वह बोला—

६—चटक-चटका और बन्दर की कहानी

किसी वन में एक शमी का वृक्ष था, उसकी बड़ी डाली पर बनैले चटक और चटका रहते थे। एक समय वे दोनों सुख में बैठे हुए थे कि वर्षा धीरे धीरे होने लगी। उसी समय एक बन्दर भीग जाने से जाड़े के मारे कांपता हुआ उस वृक्ष के नीचे आकर बैठ गया। उसको दुःखी देख चटका बोली—भद्र! तुम हाथ पैरों से तो मनुष्य जैसे [illegible] से दुखी होकर भी घर क्यों [illegible] गुस्से से बन्दर बोला, नीच! [illegible] हँसी करती है? [illegible] कुछ कहना चाहिए [illegible] ान है। [illegible] ने वृक्ष पर [illegible] ाला। इस [illegible] दा न देना

सो हे मूर्ख ! तू सिखाया हुआ भी न सीखा। और तेरा क़सूर भी नहीं है। अच्छे को शिक्षा देना गुण-कारी होता है, बुरे को नहीं।

तूने व्यर्थ अपनी पंडिताई के घमंड से मेरी बात नहीं मानी और न तूने अपनी शान्ति को ही जान पाया।

बुद्धिमान् उपाय की चिन्ता करके अपाय (नाश) को भी सोचे। मूर्ख बगले के देखते हुए नेवले ने उसके बच्चे खा लिये थे।

वह बोला, कैसे ? उसने कहा—

७—बगला, कुलीरक और नेवले की कहानी

एक वन में एक बरगद का वृक्ष था। उस पर बहुत से बगले तथा उसके खोखल में एक काला साँप रहता था। साँप बिना पर के बगलों के बच्चों को खा लिया करता था। एक बगला, जिसके बच्चे साँप ने खा लिये थे, रंजीदा होकर नदी के किनारे नीचे को मुँह किये हुए रो रहा था। उसको देख कुलीरक बोला, मामा ! आज तुम क्यों रोते हो ! उसने कहा, प्यारे ! क्या करूँ, मुझ मंद-भागी के बच्चे खोखल में रहने वाले साँप ने खा लिये हैं।

इसी दुःख से मैं रो रहा हूँ सो मुझे उसके नाश का कोई उपाय बतलाओ। यह सुन कुलीरक विचारने लगा कि यह तो हमारी जाति का ही है, ऐसा उपाय बताऊँ जो सच और झूठ हो जिससे सब बगले मारे जावें, क्योंकि—

मक्खन के समान वाणी और चित्त को निर्दयी बना कर शत्रु को ऐसा समझावे कि वंश-सहित मर जावे।

और बोला, मामा! अगर ऐसा है तो मछली के मांस के टुकड़े नेवले के बिल के द्वार से सांप की खोखल में डाल दो जिससे नेवला उस रास्ते से जाकर उस दुष्ट सांप को मार देगा। ऐसा करने पर उस नेवले ने उस सांप को मार कर उस वृक्ष पर रहने वाले सब बगले भी धीरे धीरे खा लिये। इसलिए उपाय के साथ नाश को भी विचारे।

सो हे मूर्ख! तू ने उपाय की चिन्ता तो की, नाश की नहीं, तू सज्जन नहीं है।

मूर्ख! संजीवक की प्रसन्नता न सहने वाले तू ने ऐसा काम किया है।

[illegible] भी अच्छा है, पर मर्म भलाई करने

इस तरह उन दोनों के कहते संजीवक एक क्षण पिंगलक के साथ लड़ कर उसके तेज़ नाखूनों से विदीर्ण हुआ मर कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उस को मरा हुआ देख पिंगलक उसके गुणों को याद कर बोला, अरे! संजीवक को मार कर मैंने बुरा पाप किया क्योंकि विश्वासघात से बढ़ कर दूसरा पाप नहीं है, कहा है—

मित्र से द्रोह करने वाले, किये हुए उपकार को न मानने वाले और विश्वास-घाती मनुष्य जब तक सूर्य और चन्द्रमा मौजूद हैं तब तक नरक को जाते हैं। पृथिवी का नाश और बुद्धिमान् नौकर का नाश; इन दोनों को एक सा नहीं कह सकते क्योंकि पृथिवी तो फिर भी मिल सकती है पर अच्छे नौकर का मिलना मुश्किल होता है।

मैंने सदा उसकी सभा में प्रशंसा की है। अब उन सबके आगे क्या कहूंगा जिसको सभा में पहले "यह गुणवान् है" ऐसा कहा है। प्रतिज्ञा का नाश करने वाले डरपोक मनुष्य को उनके दोष बतलाना ठीक नहीं है।

इस तरह प्रलाप करते हुए उसके सामने दमनक आ कर प्रसन्नता से बोला—देव! आपका यह न्याय

बड़ी काहिली का है, जो इस घास खाने वाले दुश्मन को मार कर सोच करते हो। राजाओं को यह उचित नहीं है।

पिता, भ्राता, पुत्र, स्त्री या दोस्त; यदि ये अपने प्राणों से द्रोह करें तो इनके मारने में पाप नहीं है।

जिसका सोच नहीं करना चाहिए उसका सोच करते हो, बुद्धिमानों के से वचन बोलते हो। पंडित मरे जिये किसी का सोच नहीं करते।

इस तरह दमनक के समझाने पर पिंगलक संजीवक का शोक छोड़ कर दमनक को मंत्री बना कर राज्य करता रहा।

मित्र-सम्प्राप्ति

दूसरा तंत्र

अब दूसरा तन्त्र मित्र-सम्प्राप्ति (मित्र के मिलने का) शुरू किया जाता है जिसके शुरू में यह कहा गया है—

सांसारिक सामानों के बिना ही विद्वान्, बुद्धिमान्, बहुत शास्त्रों का जानने वाला, जल्दी ही अपने काम को कौवे, चूहे, हरिण और कछुए की नाईं बना लेते हैं। वह यों सुना जाता है कि—

दक्षिण दिशा में महिलारोप्य नाम का एक शहर था। उसके पास ही, बड़ी छाया वाला, अनेक पक्षी जिसके फल खाया करते थे, जिसकी खोखल में असंख्य कीड़े रहते थे, जिसकी छाया में थके हुए मनुष्य आराम पाते थे, ऐसा एक बरगद का वृक्ष था। उस पर एक लघुपतनक कौआ रहता था।

वह एक दिन अपने खाने के लिए शहर की ओर ज्योंही चलने लगा त्योंही जाल को हाथ में लिये, काले जिस का, जिसके पैर फटे हुए थे, बड़े बड़े बालों वाला, यमदूत के समान एक काला मनुष्य सामने दिखलाई दिया। उसको देखते ही कौआ मन में विचारने लगा। जो यह दुरात्मा आज मेरे रहने के वृक्ष की ओर आ रहा है, नहीं मालूम वृक्ष पर रहने वालों का नाश होगा या क्या? बहुत तरह से सोच कर वह वृक्ष के पास लौट कर पक्षियों से बोला, ऐ भाइयो! यह शिकारी हाथ में जल और चावल लिये हुए आ रहा है. इसका तुम लोग विश्वास न करना। यह जाल फैला कर चावल बखेरेगा। उन चावलों को तुम कालकूट विष की तरह समझना। उसके इस प्रकार कहते हुए ही शिकारी बरगद के नीचे आया और जाल फैलाया। फिर निर्बुद्धी के समान चावलों को बखेर कर छिप रहा। वहाँ के पक्षी लघुपतनक के मना कर देने से उन चावलों को ज़हर के समान देखते हुए अलग बैठे रहे। इसी समय में चित्रग्रीव नाम कबूतरों का राजा सैकड़ों पक्षियों के साथ पेट-पूजा के लिए घूमता हुआ वहाँ आया। उन चावलों को दूर से देख कर

लघुपतनक के रोकने पर भी लालच से खाने के लिए परिवार के साथ उन चावलों पर गिर पड़ा और जाल में फँस गया। क्या ही अच्छा कहा है—

जीभ के लालच में फँसे हुए, जल में रहने वाली मछलियों की नाईं मूर्खों का मरना सोच के योग्य नहीं होता।

अथवा, दैव की प्रतिकूलता से ऐसा हुआ ही करता है। कहा है कि—

रावण ने दूसरे की स्त्री हर लेने का दोष क्यों नहीं जाना, रामचन्द्रजी ने सोने के हरिन का न हो सकना क्यों न जाना, युधिष्ठिर महाराज ने जुए के खेलने से एक साथ अनर्थ क्यों न समझा? प्रायः विपत्ति आने के समय सब की अक़्ल बिगड़ जाती है।

इस मौक़े पर वह शिकारी उन कबूतरों को बँधा हुआ जान कर प्रसन्न मन से लाठी लिये हुए उनके मारने के वास्ते दौड़ा। चित्रग्रीव भी अपने को बँधा हुआ और शिकारी को आता हुआ देख कर उन कबूतरों से बोला, अरे! डरना न चाहिए, क्योंकि—

सब तरह के दुःखों के आ जाने पर जिसकी

बुद्धि बिगड़ नहीं जाती वह उस बुद्धि के प्रभाव से निःसन्देह उन दुःखों के पार हो जाता है।

सम्पत्ति और विपत्ति के होने में महात्मा एक से बने रहते हैं जैसे सूरज उदय और अस्त होने पर लाल ही रहता है।

अब हम सब मिल कर जाल को लेकर उड़ चलें और इतनी दूर पहुँच जावें जहाँ पर यह न देख सके तो यहाँ छूट जावेंगे। यदि डर कर एक साथ न उड़ोगे तो ज़रूर मारे जाओगे।

ऐसा कहने पर वे सब भय जाल के आकाश में उड़ गये। वह शिकारी उनके पीछे दौड़ा और ऊपर को मुँह कर यह कहने लगा—

ये पक्षी मिल कर मेरे जाल को लिये जाते हैं, जब गिर पड़ेंगे तो ज़रूर मेरे क़ाबू में आजायँगे।

लघुपतनक कौआ भी अपनी पेट-पूजा छोड़ कर देखें इसमें क्या हो, ऐसा विचार कर अनोर तमाशे के उसके पीछे लगा हुआ चला गया। जब वे कबूतर नज़र से ग़ायब हो गये तब शिकारी लौटता हुआ यह कहने लगा—

जो होनहार नहीं है वह नहीं होता, जो होन-

हार है वह ज़रूर होता है, जो होनहार नहीं
वह हाथ का भी पदार्थ नष्ट हो जाता है।

पक्षियों के मांस का लोभ तो दूर रहा, परि-
वार के पालने का साधन जाल भी जाता रहा।
चित्रग्रीव भी शिकारी को आँख की ओट में गया
देख कर उनसे बोला, अरे! वह दुष्ट शिकारी तो
लौट गया। अब आराम से महिलारोप्य के उत्तर
की ओर चलो, वहाँ मेरा दोस्त हिरण्यक नाम
चूहों का राजा सबका जाल काटेगा।

इस तरह चित्रग्रीव के कहने पर वे कबूतर
महिलारोप्य नगर में हिरण्यक के बिल के पास जा
पहुँचे। हिरण्यक भी सैकड़ों बिल किये हुए क़िले में
निडर हुआ सुख से रहा करता था।

तब चित्रग्रीव बिल के पास जाकर ज़ोर से
बुलाने लगा—ऐ दोस्त हिरण्यक! जल्दी आओ,
मैं मुसीबत में गिरफ्तार हूँ। उसकी आवाज़ सुनकर
हिरण्यक क़िले के भीतर से ही बोला, भाई आप
कौन हैं? क्यों आये हैं? क्या कारण है? तुम्हारे
ऊपर मुसीबत क्या है, बतलाओ? यह सुन कर
चित्रग्रीव बोला, ऐ दोस्त! चित्रग्रीव नामक कबू-
तरों का राजा मैं आपका [illegible] शीघ्र आइए।

मेरा बड़ा कार्य है। उसकी बातें सुन कर हिरण्यक पुलकायमान शरीर, प्रसन्न मन हो जल्दी से निकला, क्योंकि :—

स्नेह वाले मित्र, नेत्रों को आनन्द देने वाले गृहस्थियों के घर में सदा आया करते हैं। बिना घर वालों के नहीं।

जिसके घर में सदा मित्र आया करते हैं उसके चित्त में उसके बराबर और कोई सुख नहीं होता।

तब चित्रग्रीव को परिवार के सहित जाल में बँधा देख हिरण्यक रंजीदा होकर बोला, अरे मित्र! यह क्या है? उसने कहा, ऐ मित्र! जान कर क्या पूछते हो?

यह मुझे बंधन जीभ के लालच से मिला है। अब तू जल्दी जाल काट दे। यह सुन कर हिरण्यक चित्रग्रीव के जाल को काटने के लिए तैयार हुआ। चित्रग्रीव उससे बोला, प्यारे! ऐसा मत करो, पहले मेरे साथियों के जाल काटो, पीछे मेरे भी। यह सुन गुस्से से हिरण्यक बोला, मित्र! तुमने ठीक नहीं कहा, क्योंकि नौकर मालिकों के पीछे होते हैं। उसने कहा, प्यारे! ऐसा मत कहो,

ये बिचारे मेरे साथ के रहने वाले अपने अपने परि-वार को छोड़ कर मेरे साथ आये हैं, क्या मैं इनका इतना भी आदर न करूँ; कहा है :—

जो राजा नौकरों का सदा अधिक आदर करता है, तो वे धन के रहने पर भी उसको कभी नहीं छोड़ते।

फिर शायद मेरा जाल काटने में तेरे दाँत ही टूट जावें और वह शिकारी आ जावे तो मुझे ज़रूर नरक मिलेगा। कहा गया है—

जो स्वामी अच्छे चाल चलन वाले नौकरों के दुःखी होने में सुखी होता है वह परलोक में नरक पाता और यहाँ भी दुःखी रहता है।

यह सुन कर प्रसन्न हुआ हिरण्यक बोला, हे मित्र! मैं राजधर्म जानता हूँ, मैंने तो तुम्हारी परीक्षा की थी। पहले औरों के जाल काटूँगा। आप भी इस तरह बहुत से कबूतरों के परिवार वाले बनेंगे।

यह कह कर सबके जाल काट कर हिरण्यक चित्रग्रीव से बोला, मित्र! अब अपने घर को पधारो, फिर भी संकट के समय आ सकते हो। इस तरह उन कबूतरों को भेज कर हिरण्यक अपने क़िले में घुस गया। चित्रग्रीव मय परिवार के अपने चला गया। यह ठीक कहा गया है—

जिसके मित्र होते हैं वह मुश्किल से मुश्किल काम को ठीक कर लेता है, इसलिए अपने समान मित्र बनाने चाहिएँ।

लघुपतनक कौआ चित्रग्रीव का जाल से छूटने का सारा हाल देख कर आश्चर्ययुत हो सोचने लगा, इस हिरण्यक की बुद्धि, शक्ति और किले का सामान धन्य है। जाल से परिन्दों के छूटने का यह उपाय कैसा अच्छा है। मैं किसी का विश्वास नहीं किया करता और चंचल भी हूँ। तो भी मैं इसको मित्र बनाऊँगा।

सब साधनों वाले होकर भी होशियार आदमियों को मित्र बनाने चाहिएँ। समुद्र सब तरह सामर्थ्यवान् होने पर भी चन्द्रमा के उदय का इंतज़ार किया करता है। ऐसा विचार कर वृक्ष से नीचे आ, बिल के दर्वाज़े पहुँच कर चित्रग्रीव की नाईं आवाज़ देकर, हिरण्यक को बुलाने लगा। आओ, दोस्त हिरण्यक! आओ। उसकी आवाज़ सुन कर हिरण्यक सोचने लगा, क्या कोई और कबूतर जाल में बंधा बाक़ी रह गया है, जो मुझे बुलाता है। और बोला, आप कौन हैं? उसने कहा, मैं लघुपतनक नाम कौआ हूँ। यह सुन, और भी भीतर घुस कर

हिरण्यक बोला अरे! यहां से जल्दी चला जा। कौआ बोला, मैं बड़े काम से तुम्हारे पास आया हूँ, मुझे दर्शन क्यों नहीं देते? हिरण्यक ने कहा, तुम्हारे साथ मिलने से मेरा कुछ काम नहीं। कौए ने कहा, तुमसे चीत्रग्रीव का जाल से छूटना देख कर मुझे बड़ी प्रीति हो गई है। शायद मैं भी कभी जाल में फँस जाऊँ तो आपसे छुटकारा हो सकेगा, सो मेरे साथ मित्रता करो। हिरण्यक बोला, अरे! अचम्भे की बात है कि तू तो खाने वाला और मैं तेरे खाने की चीज़ हूँ, भला तेरी मेरी मित्रता कैसी? जाओ, विरोध के होने से मित्रता नहीं हो सकती। क्योंकि—

जिनका समान धन और समान कुल हो उन्हीं की मित्रता और विवाह होना उचित है, विरुद्धों में नहीं।

और, जो मूर्ख कमोबेश असमानों से मित्रता करता है, उसकी हँसी हुआ करती है।

इससे तुम चले जाओ। कौआ बोला, ऐ हिरण्यक! मैं आपके दर्वाज़े पर पड़ा हूँ। यदि आप मेरे साथ मित्रता न करेंगे तो इसी वक्त आपके सामने प्राणों को छोड़ दूँगा। हिरण्यक ने कहा, अरे! तुझ वैरी

के साथ मेरी मित्रता कैसी! मिठबोल और सन्धि (मेल) की इच्छा करने वाले वैरी से मेल न करे, अच्छा गरम पानी भी आग को बुझा ही देता है।

कौवे ने कहा, आपका तो मैंने कभी दर्शन ही नहीं किया था, फिर वैर क्यों कर हुआ। आप ऐसा क्यों कहते हैं? हिरण्यक ने कहा। वैर दो तरह का होता है, एक तो स्वाभाविक, दूसरा कृत्रिम (कर्म से किया हुआ); तुम हमारे स्वाभाविक वैरी हो।

कृत्रिम वैर झट कृत्रिम गुणों से जाता रहता है और स्वाभाविक विना प्राणदान के नहीं जाता।

कौवे ने कहा, दो प्रकार के वैर की तारीफ़ सुनना चाहता हूँ, सो बतलाओ। हिरण्यक ने कहा, जिस कारण से वह हुआ था उसी से जाता रहे वह कृत्रिम है, उसके योग्य कामों से जाता रहता, है। स्वाभाविक तो किसी प्रकार से नहीं जाता, जिस तरह न्यौले और सांप का, घास खाने वाले और हिंसक जानवरों का, जल और आग का, देव और राक्षसों का, कुत्ते और बिल्ली का, धनी और ग़रीब का, सौतों का, शिकारी और हरिणों का, वेद-पाठी और भ्रष्ट क्रियावालों का, मूर्ख और पण्डितों का, पतिव्रता और कुलटाओं का, सज्जन और दुर्जनों का

बैर कभी नहीं जाता। किसी को किसी ने मार नहीं डाला तो भी वे एक दूसरे के बैरी हैं।

कौवे ने कहा—कारण से ही मित्र और कारण से ही शत्रु हो जाते हैं, इसलिए बुद्धिमान् को मित्रता ही करनी चाहिए, बैर नहीं।

इस लिए मेरे साथ मित्रता करो, बैर नहीं। हिरण्यक ने कहा, नीति का असली मतलब सुनो—

जो एक बार दुष्ट हुए मित्र के साथ फिर मेल करना चाहता है वह मानों मौत बुलाता है।

कौवे ने कहा, यह तो ठीक है तो भी सुनो—
उपकार से लोगों की, किसी कारण से जानवर और परिन्दों की, भय और लोभ से मूर्खों की और दर्शन करने से ही अच्छे पुरुषों की मित्रता होती है।

मिट्टी के घड़े की नाईं सुख से तोड़ने योग्य और फिर जुड़ने के अयोग्य दुर्जन होता है। सुजन सोने के घड़े की नाईं दुर्भेद्य और जल्दी जुड़ जाने वाला होता है।

ईख के आगे के हिस्से में जैसे रस धीरे धीरे बढ़ता जाता है, इसी तरह सुजनों की मित्रता बढ़ती है दुर्जनों की इस से विपरीत होती है।

पहले तो बहुत, फिर धीरे धीरे कम बुरों

की मित्रता होती है । पहले थोड़ी, धीरे धीरे सज्जनों की मित्रता बढ़ती है ।

सो मैं साधु हूँ और तुझ को क़सम खा कर निडर करूँगा। उसने कहा, मुझे क़सम का विश्वास नहीं है क्योंकि—

क़सम खाकर मेल करने वाले शत्रु का विश्वास न करे। सुना जाता है कि क़सम खा कर इन्द्र ने वृत्रासुर को मार डाला था।

यह सुन कर लघुपतनक भी कुछ उत्तर न दे सका और विचारने लगा, अहो! नीति के विषय में इसकी कैसी तेज़ अक़ है। और उससे बोला हे हिरण्यक!

पण्डित लोग कहते हैं कि सात पैर साथ चलने से अच्छे पुरुषों की मित्रता होती है, इस कारण तू मेरा मित्र हुआ, मेरा कहना सुन।

जो इस तरह विश्वास नहीं करते हो तो क़िले ही में रह कर तेरी मेरे साथ अच्छी तरह से बात चीत और गुण दोष आदि का कहना सदा हुआ करेगा। यह सुन कर हिरण्यक भी विचारने लगा, यह लघुपतनक तो बोलने में

मधुर मधुर मालूम होता है, अतः बोलने वालों को [illegible] होता है और इसके [illegible] [illegible] है। परन्तु कभी भी [illegible] [illegible] [illegible] न रखिये।

यह सुन कौआ बोला, भद्र! ऐसा ही होगा। उस दिन से वे दोनों आपस में अच्छी अच्छी बातें करते हुए रहने लगे। लघुपतनक मांस के टुकड़े और पवित्र बलिशेष, और और भी चीजें पकी हुई लाकर हिरण्यक को देता था। हिरण्यक भी रात में चावल और और भी खाने की चीजें लघुपतनक के वास्ते इधर उधर से लाकर लघुपतनक को खाने को दे देता था।

दान का माहात्म्य तत्काल विश्वास दिलाने वाला होता है। उसके प्रभाव से [illegible] उसी वक्त मित्र बन जाता है।

इस तरह वह चूहा उसके उपकार से प्रेमी हुआ ऐसा विश्वासी हो गया कि उसके साथ सदा बात चीत करता था। एक दिन कौआ आँखों में आँसू भर उसके पास आ गद्गद् वाणी से उससे बोला, भद्र हिरण्यक! इस देश पर अब मुझ को वैराग्य हुआ है, इसलिए और कहीं जाऊँगा।

चूहे ने कहा, भद्र ! वैराग्य का क्या कारण है ? वह बोला, भद्र ! सुनो इस देश में वर्षा न होने से अकाल पड़ गया है, अकाल के कारण कोई बलि मात्र भी नहीं देता, घर घर में भूख के मारे लोगों ने पक्षियों को बांधने के लिए जाल फैला रक्खे हैं। मैं कुछ उम्र बाकी होने से जाल में पड़ कर निकल आया हूँ। यही वैराग्य का कारण है। अब मैं विदेश को जाता हूँ, इसी से आँसू बहा रहा हूँ। हिरण्यक ने कहा, तो आप कहाँ जायेंगे ? वह बोला, वन में एक बड़ा तालाब है वहाँ तुम से भी अधिक मेरा मित्र मन्थरक नाम वाला कछुआ रहता है। वह मुझे मछलियों के टुकड़े खाने को दिया करेगा। उसके साथ रह कर अच्छी अच्छी बात चीत करता हुआ समय को आनन्द में बिताऊंगा। यहाँ पर मैं जाल में फँस कर पक्षियों के मरने को नहीं देख सकता। क्योंकि—

वर्षा के न होने से देश का नाश, खेती के न होने से प्रलय और कुल का नाश जो नहीं देखते हैं वही धन्य हैं।

विद्वत्ता और राजापन कभी बराबर नहीं

है? रखते। राजा अपने देश में ही पूजा जाता है और विद्वान सब जगह।

हिरण्यक ने कहा, यदि ऐसा है तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा, मुझे भी बड़ा दुःख है। कौवे ने कहा, तुम्हें क्या दुःख है? चूहे ने कहा [illegible] बहुत कहना है। वहाँ चल कर सब हाल कहना होगा।

कौवा बोला, मैं तो आकाश में चलने वाला हूँ। तुम मेरे साथ कैसे चलोगे? वह बोला, यदि मेरे प्राणों की रक्षा करना चाहते हो तो मुझे अपनी पीठ पर चढ़ा कर वहाँ ले चलो, दूसरी तरह मैं नहीं जा सकता। यह सुन कर ख़ुशी से कौवा बोला जो ऐसा है तो मैं ख़ुश क़िस्मत हूँ जो आप के साथ समय बीतेगा। मैं सम्पात आदि आठ गति उड़ने की जानता हूँ। तुम मेरी पीठ पर चढ़ो मैं तुमको अच्छी तरह उस तालाब पर ले चलूँ।

यह सुनते ही हिरण्यक फ़ौरन उसके ऊपर चढ़ गया। वह धीरे धीरे उसको लिये हुए सम्पात उड़ने की चाल से उस तालाब पर पहुँचा। लघुपतनक के ऊपर चूहे को चढ़ा हुआ देख कर दूर से ही वह देश-काल का जानने वाला मंथरक,

कोई बड़ा कौआ है ऐसा समझ कर जल में घुस गया। लघुपतनक भी किनारे के वृक्ष की खोखल में चूहे को छोड़ कर डाली पर बैठ ऊँची आवाज़ से बोला, अरे मन्थरक! आओ आओ तेरा मित्र लघुपतनक नाम कौआ आया हूँ, आकर मुझ से मिलो। क्योंकि—

चन्दन, कपूर, हिम और ठंडी चीज़ों से क्या? वे सब मित्र के शरीर की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं हैं।

और, अमृत के समान 'मित्र' ये दो अक्षर किसने रचे हैं जो आपत्ति से बचाने वाले और शोक-सन्ताप के नाशक हैं।

यह सुन उसको अधिक चतुर जान, जल से निकल, पुलकायमान शरीर, आनन्द के आंसू नेत्रों में भर कर मन्थरक बोला, आओ, आओ मित्र। मुझसे मिलो। बहुत दिन में दर्शन होने के कारण मैंने तुमको न पहचाना, इसीसे जल में घुस गया था।

बृहस्पति ने कहा है कि जिसका पराक्रम, कुल और चेष्टा न जाने उसकी संगति न करे।

ऐसा कहने पर लघुपतनक वृक्ष से नीचे आ उससे मिला। कहा है—

शरीर के धोने मात्र से उत्पन्न अमृत के प्रवाह से क्या है? बहुत दिन में मित्र से मिलने का मूल्य नहीं है।

इस तरह वे दोनों ही परस्पर मिल कर पुलकित शरीर हो वृक्ष के नीचे बैठ कर अपना अपना हाल कहने लगे। हिरण्यक चूहा भी मन्थरक को प्रणाम कर कौवे के पास बैठ गया। उसको देख कर मंथरक लघुपतनक से बोला, भाई! यह चूहा कौन है? यह खाने की चीज़ तुम अपनी पीठ पर बैठ कर क्यों लाये हो? इसका कोई ख़ास सबब होगा। यह सुन लघुपतनक बोला, यह हिरण्यक चूहों का राजा है, मेरा मित्र, दूसरा प्राण है, बहुत कहने से क्या है!

जैसे मेघ की धारा, जैसे आकाश के तारे और जैसे रेणु की गिनती नहीं हो सकती, इसी तरह इस महात्मा के गुणों की गिनती नहीं हो सकती! यह बहुत निर्वेद (दुःख) पा कर आपके पास आया है।

मन्थरक ने कहा, इसके वैराग्य का क्या कारण है? कौआ बोला, मैंने पूछा था पर इसने कहा कि इसमें बहुत कुछ कहना है वहीं चल कर कहूँगा,

मुझे भी कारण नहीं बतलाया था। हे मित्र हिरण्यक! अब तो हम दोनों प्रेमियों से अपने वैराग्य का कारण बतलाओ, वह बोला—

१—चूहा और एक साधु की कहानी

दक्षिण देश में महिलारोप्य नाम का एक नगर था। उसके पास ही महादेव का मन्दिर था। उसमें ताम्रचूड़ नाम का एक साधु रहता था। वह शहर में से भिक्षा माँग कर अपना निर्वाह किया करता था। खाने से बची हुई भिक्षा भिक्षापात्र में रख, खूँटी पर टाँग कर सो जाता था। सवेरे वह भिक्षा नौकरों को देकर मन्दिर में बुहारी लगाने और लीपने का हुक्म देता था।

एक दिन मेरे साथियों ने कहा कि इस मन्दिर की खूँटी पर पका अन्न सदा रक्खा रहता है, उसको हम खाने में असमर्थ हैं। आपको कुछ भी मुश्किल नहीं है। आप दूसरी जगह फ़िज़ूल क्यों घूमा करते हैं? आज आपकी कृपा से हम सब वहाँ चल कर भोजन करें तो अच्छा हो। यह सुन कर मैं उसी क्षण सब चूहों को साथ लेकर वहाँ गया और कूद कर उस बर्तन पर पहुँचा। उसमें से चीज़ें

निकाल कर मैंने पहले अपने साथियों को दीं, बाद मैंने भी खाई। सबकी तृप्ति होने के बाद सब अपने घर को चले जाते थे। इस तरह रोज़मर्रा उस भिक्षा को खाया करते थे। साधु भी भिक्षा की रोज़ रक्षा करने लगा, पर जब वह सो जाता था तो मैं उस खूँटी पर चढ़ कर अपना काम किया करता था। एक समय मेरी रक्षा के लिए उसने बड़ा उपाय किया कि एक फटा बाँस लाया और उस बाँस को सोता हुआ भी खट खटाया करता था। मैं चोट लगाने के भय से विना ही खाये हुए चला जाने लगा। इस तरह सारी रात उसके साथ लड़ते हुए बीतने लगा।

एक दिन वृहत्स्फिक नाम का एक साधु उस का मित्र वहाँ बतौर पाहुने के आया। उसको देख कर उसने अभ्युत्थान करके उसका आदरपूर्वक अतिथि-सत्कार किया। रात को सोते समय वे दोनों आपस में धर्म की चर्चा करने लगे। वृहत्-स्फिक से बात चीत करता हुआ वह संन्यासी सिर्फ़ हुंकार कर देता था। और उसका ध्यान मेरे ही डराने में लगा हुआ था। तब वह अतिथि ग़ुस्से में भर कर उससे कहने लगा हे ताम्रचूड़! मैंने भले प्रकार

जान लिया कि तू हमारा मित्र नहीं है। तू हमसे अच्छे प्रकार नहीं बोलता, इससे मैं रात में ही मंदिर को छोड़ कर दूसरी जगह चला जाऊँगा। क्योंकि—

जो गृहस्थ अतिथि को अपने घर आया देख कर इधर उधर या नीचे को देखा करता है, ऐसे के घर जाने वाले बिना सींग के पशु हैं।

जहाँ बड़ों को आता देख कर छोटे उठ कर अभ्युत्थान नहीं करते, मीठी बात चीत नहीं करते और जहाँ गुण-दोष की बात चीत नहीं होती ऐसे के स्थान में जाना अच्छा नहीं है।

एक ही मंदिर पा कर तू बड़ा अहंकारी हो गया है, तूने मित्रों से स्नेह करना छोड़ दिया। तू यह नहीं जानता कि मन्दिर के सहारे के बहाने से तू ने नरक के सामान कर रक्खे हैं।

मूर्ख! तू अहंकारी है। इसका मुझे बड़ा ख़याल है। मैं आज ही इस मन्दिर को छोड़ कर चला जाऊँगा। यह सुन भय से घबरा कर ताम्रचूड़ उससे बोला अरे भाई! ऐसा न कहो। तुम्हारे बराबर मेरा प्यारा दोस्त और कोई नहीं है। सुनो, जिस कारण तुम्हारी बात मैंने न सुनी—यह दुष्ट चूहा ऊँचे स्थान में रक्खी हुई भिक्षा पर कूद कूद कर चढ़ जाता है,

और भिक्षा खा लेता है, इसी कारण मन्दिर में बुहारी भी नहीं लगती। इसी कारण से चूहे को डराने के लिए फटे बाँस को बार बार मैं खटखटाता हूँ। दूसरा तमाशा यह कि इस दुष्ट ने अपने कूदने के आगे बिल्ली और बन्दर आदि को भी कुछ नहीं समझा। वृहत्स्फिक बोला, उसका बिल जानना चाहिए। ताम्रचूड़ ने कहा, महाराज! मैं अच्छी तरह नहीं जानता। वह बोला, उसका बिल ज़रूर धन के ऊपर है, धन की गर्मी से कूदता है, कहा गया है कि-

धन की गर्मी मनुष्य के तेज को बढ़ाती है और यदि उसका भोग या त्याग हो तब तो कहना ही क्या है।

चूहे ने कहा, तब मैं डरकर व्याकुल हुआ परिवार सहित उस रास्ते को छोड़ कर और रास्ते को जाने के लिए तैयार हुआ और परिवार सहित जब आगे चला तब तो एक बड़ा मोटा बिलाव सामने आ गया। वह चूहों को देख कर एक साथ उन पर टूट पड़ा। तब वे चूहे मुझ कुमार्ग गामी को देख निन्दा करते हुए मरने से बचे और अपने ख़ून से पृथ्वी को रक्तमय करते हुए उसी बिल में घुस गये।

इसके बाद मैं तो अकेला ही दूसरी जगह चला

गया और ये सब चूहे मूर्खता से उसी बिल में घुस गये। इतने ही में वह दुष्ट संन्यासी ख़ून की बूँदों से भीगी हुई उस पृथिवी को देख, उसी जगह आ खड़ा हुआ और अपने हाथ से बिल को खोदने लगा। खोदते हुए उसने वह ख़ज़ाना पाया जिसके कारण मैं घमण्ड से रहा करता था, जिसकी गर्मी से महादुर्ग को भी जा सकता था। तब प्रसन्न होकर ताम्रचूड़ से पाहुने ने कहा, हे भगवन्! अब निडर होकर सोओ। इसी धन की गर्मी से यह चूहा आपको जगाता था। यह कह वे दोनों उस धन को ले मन्दिर की ओर चले और मैं उस धन-रहित स्थान की ओर गया तो मैं उस स्थान को न देख सका और मन में सोचता रहा कि क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, मेरे मन में कैसे शान्ति हो। इस तरह बड़ी तकलीफ़ में वह दिन बीता। फिर सूर्य के छिप जाने पर उत्साहहीन हुआ मैं सब परिवार के उस मन्दिर में गया तो मेरे परिवार का शब्द सुन कर ताम्रचूड़ फिर भी फटे बाँस से उस भिक्षा के बर्तन को खटखटाने लगा। तब पाहुने ने कहा, भाई अब भी निडर होकर नहीं सोते? उसने कहा, भाई! क्या करें वह दुष्टात्मा चूहा फिर परिवार

सहित आ गया है। उसी के डर से फटे बाँस से भिक्षा का बर्तन खटखटाता रहता हूँ। तब पाहुना हँस कर बोला मित्र! डरो मत, धन के साथ इसके कूदने का उत्साह जाता रहा है, सब जन्तुओं की ऐसी ही रीति है।

तब मैं उनकी बातें सुन, ग़ुस्से में भर कर भिक्षा के बर्तन की ओर अधिक कूदने लगा, पर वहाँ तक न पहुँच कर ज़मीन पर गिर गया, यह सुन मेरा शत्रु हँस कर ताम्रचूड़ से बोला, अरे देव! तमाशा देख! और बोला—

धन ही से सब बलवान् होते हैं धनी ही पंडित माना जाता है, अब इस फ़िज़ूल मेहनत करने वाले चूहे को अपनी जात में समान हुआ देखो।

अब तुम निडर हो कर सोओ, जो इसके कूदने का कारण था वह तो हमारे हाथ लग गया।

यह सुन मैं सोचने लगा कि अब तो अंगुली मात्र भी कूदने की ताक़त नहीं है। विना धन के पुरुष का जीना व्यर्थ है क्योंकि—

विना धन के, थोड़े बुद्धिमान् पुरुष के सब काम ऐसे बिगड़ जाते हैं जैसे गर्मी में थोड़े जल वाली नदियाँ।

निर्धन पुरुष के मनोरथ उठ उठ कर वहीं नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार विलाप कर और उत्साह-हीन होकर मैं उस धन को कंधे के नीचे रक्खा देख कर सवेरे अपने बिल में गया, तब मेरे साथियों ने आपस में कहा, अहो! अब यह हमारा पेट भरने में असमर्थ है। इसके पीछे पीछे चलने से अब बिलाव आदि की विपत्ति भी होती है अब इसकी सेवा से क्या है? क्योंकि जिसके पास रहने से फ़ायदा न हो, केवल विपत्ति ही हो, ऐसे स्वामी को दूर से ही नौकरों को त्याग देना चाहिए।

तब उनकी बात चीत सुन मैं बिल में घुस गया। जब कोई मेरे पास न आया तब मैं सोचने लगा कि इस ग़रीबी को धिक्कार है। क्योंकि ग़रीब मनुष्य, बिना सन्तान का, वेद का न पढ़ा ब्राह्मण और बिना दक्षिणा के यज्ञ; ये सब व्यर्थ होते हैं।

इस तरह मेरे विचार करने पर वे सब सेवक शत्रु हो गये। वे मुझको अकेला देख चिढ़ाने लगे। फिर एक दिन एकान्त में मैंने विचारा कि उस सोते हुए तपस्वी के पास जा कर उसके तकिये में लपेटी हुई धन की पेटी को, धीरे धीरे काट

कर उसके धन को अपने बिल में खींच लाऊँ जिस से फिर मेरा भी पहले के समान बड़प्पन हो जावे।

यह विचार कर रात को उस जगह जाकर ज्यों ही मैंने उस गठरी में छेद किया त्यों ही वह दुष्ट जाग गया और उस फटे बाँस को मेरे सिर में मारा। किसी प्रकार आयु शेष रहने से मैं निकल तो गया, मरा नहीं।

मनुष्य प्राप्तव्य धन को पाता है उस को दैव भी नहीं रोक सकता; इस कारण न मैं सोच करता हूँ और न मुझको दुःख है, क्योंकि जो हमारा है वह दूसरों का नहीं हो सकता।

यह सब सुख दुःख मालूम करके बड़ा दुखी हो कर यह मित्र मुझे तुम्हारे पास लाया है। यही मेरे वैराग्य का कारण है। मन्थरक ने कहा, प्यारे मित्र! सन्देह करता ही है जो यह भूख से घबराया हुआ तुझ शत्रु को खाने योग्य होने पर भी पीठ पर चढ़ा कर लाया और रास्ते में खाया नहीं। कहा गया है—

जिसका कभी चित्त धन के कारण बदलता नहीं उससे सब समय मित्रता की इच्छा करे, उत्तम मित्र बनावे।

आपत्ति का समय आने पर जो मित्र है, वही मित्र है। तरक्की के वक्त, तो दुर्जन भी मित्र बन जाते हैं। इसलिए आज मेरा भी इस विषय में विश्वास हुआ है कि नीति के विरुद्ध यह मित्रता मांस खाने वाले कौओं के साथ जलचरों की है। यह अच्छा बतलाया गया है—

न तो कोई किसी का मित्र है, न वैरी। मित्र के विपरीत कार्य की परीक्षा से वैरी दीखता है।

सो आपका मङ्गल हो, अपने घर की नाईं इस तालाब के किनारे ठहरो और जो आपके धन का नाश और परदेश में रहना हुआ है इसका दुख न मानना चाहिए। क्योंकि—

बादलों की छाया, दुष्टों की प्रीति, पका अन्न, यौवन और धन ये थोड़े समय के लिए भोग्य होते हैं। इसी कारण ज्ञानी और आत्मा के जीतने वाले पुरुष धन में लवलीनता नहीं करते।

यह मूर्ख मनुष्य धन के लिए जितना कष्ट सहता है, मोक्ष की इच्छा वाला उसका सौवाँ हिस्सा परिश्रम करे तो मुक्ति पा लेवे।

और, परदेश में रहने से पैदा हुआ वैराग्य भी तुमको न करना चाहिए, क्योंकि—

धीर बुद्धिमान को अपना और पराया देश क्या ? वह जिस देश में रहता है उसी को अपनी बुद्धि के प्रताप से जीत लेता है, जैसे दाढ़, नाख़ून और पूँछ के प्रहार से सिंह वन में घूमता फिरता है । और वन में मारे हुए हाथी के .ख़ून से अपनी तृष्णा बुझाता है ।

धनहीन परदेश में गया हुआ भी यदि बुद्धिमान हो तो किसी प्रकार दुखी नहीं होता, क्योंकि—

शक्ति वालों को बड़ा भार क्या है ? व्यापारियों को दूर क्या है ? विद्वानों को परदेश क्या है ? प्यारा बोलने वालों को दूसरा कौन है ? अर्थात् दूसरा कोई नहीं ।

आप तो बुद्धि के सागर हैं साधारण मनुष्य के समान नहीं हैं ।

उत्साह वाले, आलस्य रहित, क्रिया की विधि जानने वाले, बुरी आदत में न पड़ने वाले, बहादुर, करने योग्य काम को जानने वाले, दृढ़ मित्रता वाले पुरुष को लक्ष्मी स्वयं ढूँढ़ा करती है ।

पाया हुआ धन कर्म के वश से नष्ट हो जाता है । इतने दिन तक तुम्हारे पास धन रहा, दूसरे का धन कोई एक क्षण भी नहीं

भोग सकता, स्वयं आया हुआ भी प्रारब्ध से छीना जाता है।

इससे हे प्यारे हिरण्यक ! ऐसा समझ कर धन का शोक न करो। मौजूद धन का भी भोग करने की शक्ति न होने से उसको न होने के समान समझना चाहिए। कहा है कि—

घर में गाड़े हुए धन से ही यदि हम धनी हैं तो उसी धन से हम क्यों न धनी समझे जायें ?

इकट्ठा किये धन का खर्च करना ही रक्षा करना है। जैसे दरिया के पानी का निकलना।

दान, भोग और नाश, धन की ये तीन गति मानी गई हैं, जो न दान करता, न भोगता ही है उसके धन की तीसरी गति (नाश) अवश्य होती है। ऐसा समझ कर बुद्धिमान् को जोड़ने के लिए धन न कमाना चाहिए, क्योंकि यह दुःख का कारण होता है।

साँप हवा खा कर रहते हैं पर कमज़ोर नहीं होते, सूखे तिनके खाकर ही बन के हाथी बड़े बली होते हैं, मुनि लोग कन्द मूल फल से ही समय बिताया करते हैं। सन्तोष ही मनुष्य के लिए बड़ा सुखदायी है।

सन्तोष रूपी अमृत से तृप्त हुए शान्त-चित्त

वालों को जो सुख होता है वह धन के लालची इधर उधर घूमने वालों को नहीं होता।

अमृत के समान सन्तोष का पान करने से परम शान्ति होती है, और असन्तोषी पुरुष को सदा दुःख होता है।

चित्त के रुकने से सब इन्द्रियां रुक जाती हैं जैसे मेघ के ढकने से सूर्य की किरणें भी ढक जाती हैं।

शान्ति चित्त वाले महर्षि इच्छा के काटने को सुख कहते हैं, आग के पास बैठने से जैसे प्यास नहीं बुझती, इसी तरह धन से कभी इच्छा पूरी नहीं होती।

मनुष्य धन के लिए निन्दा के न योग्य की भी निन्दा करता है, तारीफ़ के न योग्य की भी तारीफ़ किया करता है, बहुत क्या, वह क्या क्या नहीं करता।

जो मनुष्य धर्म के लिए ही धन इकट्ठा करता है, यह काम भी उसका अच्छा नहीं क्योंकि कीच के धोने से उसका न छूना ही अच्छा है।

दान के बराबर दूसरा कोई ख़ज़ाना नहीं है, लोभ से अधिक संसार में मनुष्य का कोई शत्रु नहीं है, शील के समान दूसरा गहना नहीं है, और संतोष के समान दूसरा धन नहीं है।

ऐसा जान कर हे मित्र ! आपको सन्तोष करना चाहिए। मन्थरक के वचन सुन कर कौआ बोला, अरे मन्थरक ! जो तू ऐसा कहता है तो ऐसा ही तुझे अपने मन में विचार करना चाहिए। यह ठीक कहा है—

संसार में सदा प्रिय वचन बोलने वाले बहुत हैं, परन्तु सुनने में अप्रिय, पर वास्तव में हितकारी, वचन के कहने सुनने वाले दुर्लभ हैं।

इस संसार में जो मनुष्य अप्रिय तथा हितकारी वचन कहते हैं वे ही सुहृद् हैं, दूसरे तो नाम-धारी हैं।

इस तरह उनके बात चीत करते हुए चित्राङ्ग नाम एक हरिण, शिकारी से डरा हुआ उसी तालाब में घुस गया। तब उसको डर से घबराया हुआ देख कर लघुपतनक तो वृक्ष पर चढ़ गया, हिरण्यक पास के सरकंडों में घुस गया, मन्थरक तालाब में चला गया। तब लघुपतनक, हरिण को अच्छी तरह जान कर मन्थरक से बोला, आओ, आओ, मित्र मन्थरक ! यह हरिण प्यास के मारे घबराया हुआ तालाब में घुस गया है। यह उसी की आवाज़ है, मनुष्य की नहीं। यह सुन,

मन्थरक देशकाल के अनुसार कहने लगा, कि हे लघु-पतनक ! जिस तरह यह हरिण लम्बी लम्बी साँस लेता हुआ चकित हो कर पीछे को देखता है, इससे मालूम होता है, कि यह प्यासा नहीं है, अवश्य ही शिकारी से डरा हुआ है, सो मालूम करना चाहिए कि इसके पीछे शिकारी आते हैं या नहीं। क्योंकि—

भय से डरा हुआ मनुष्य बार बार साँस लिया करता है और चारों ओर देखा करता है, उसको चैन नहीं पड़ा करता।

यह सुन चित्रांग बोला, हे मन्थरक ! तू ने मेरे डरने का कारण जान लिया। मैं शिकारी के तेज़ बाणों से बच कर मुश्किल से यहाँ तक आया हूँ। मेरा झुंड उन शिकारियों ने मार डाला होगा। अब शरण में आये हुए मुझको कोई ऐसा स्थान बतलाओ जहां शिकारी न पहुँच सकें। यह सुन मन्थरक बोला हे चित्रांग ! नीतिशास्त्र सुनो—

शत्रु से बचने के दो ही उपाय हैं, एक तो हाथ चलाना, और दूसरे जल्दी से भाग जाना।

अब जल्दी घने वन को चले जाओ, जब तक वे शिकारी न आ जावें। इतने ही में लघुपतनक जल्दी से आकर बोला, हे मन्थरक ! वे शिकारी तो

अपने घर की ओर चले गये। इसलिए हे चित्रांग! निडर होकर तू वन से बाहर हो। तब वे चारों ही मित्र बन कर उस तालाब में दोपहर के समय, वृक्ष की छाया के नीचे, अच्छी तरह बात चीत करते हुए सुख से समय विताने लगे।

एक दिन बात चीत करने के समय चित्रांग न आया तब वे घबरा कर आपस में कहने लगे, अहो। आज हमारा मित्र क्यों नहीं आया, क्या कहीं सिंह आदि ने मार डाला, या शिकारी से मारा गया, या आग या गहरे गड्ढे में गिर गया, या नये तिनकों के लोभ से कहीं गिर पड़ा।

तब मन्थरक कौवे से बोला, हे लघुपतनक! मैं और हिरण्यक दोनों ही उसके ढूँढ़ने को असमर्थ हैं, कारण यही है कि हमारी चाल सुस्त है। सो तुम जाकर वन में उसको खोजो। तब वह लघुपतनक थोड़ी ही दूर गया कि एक छोटे तालाब के किनारे चित्रांग कपट के जाल में बँधा मिला। उसको देखते ही घबरा कर उस से बोला, हे प्यारे। यह क्या है? चित्रांग भी कौवे को देख कर बड़ा दुखी हुआ। यह ठीक कहा गया है—

किसी दुख के होने पर या नष्ट होने के समय अपने

मित्रों के देखने से प्राणियों को अधिक दुःख हुआ करता है।

उसके कहने पर चित्रांग लघुपतनक से बोला, हे मित्र! यह मेरी मृत्यु आई है, अच्छा हुआ जो आपका दर्शन मुझे मिल गया। क्योंकि—

मित्र के मरने के समय मित्र का दर्शन हो जावे तो दोनों ही तरह से, अर्थात् मित्र की चतुराई से जीवन और मृतक होने पर उसका संस्कार करने से सुख मिलता है।

आप क्षमा करना, यदि बात चीत करते हुए कोई अनुचित बात मुझ से हो गई हो और हिरण्यक तथा मन्थरक से भी यह मेरी ओर से कह देना कि जान कर या विना जाने मैंने कभी तुम्हारे कहने को लौट दिया हो तो मेरे ऊपर प्रीति करके तुमको क्षमा करना चाहिए।

यह सुन कर लघुपतनक ने कहा, मित्र! हम जैसे मित्रों के विद्यमान होते हुए तुम भय मत करो, मैं जल्दी हिरण्यक को लेकर आता हूँ, जो सज्जन होते हैं वे आपत्ति पड़ने पर घबराते नहीं। कहा है कि, जो धन की अधिकता में ख़ुशी, विपत्ति पड़ने पर दुःखी नहीं होते और युद्ध में भय नहीं करते

ऐसे तीनों भुवनों के तिलक किसी विरले ही पुत्र को माता उत्पन्न किया करती है।

इस प्रकार लघुपतनक चित्रांग को समझा कर, हिरण्यक और मन्थरक के पास जाकर चित्रांग के जाल में फँसने का कुल हाल कह दिया और हिरण्यक चित्रांग के जाल को ज़रूर काट देगा, यह निश्चय किये हुए हिरण्यक को पीठ पर चढ़ा कर बहुत जल्दी चित्रांग के पास आया। वह भी चूहे को देख, कुछ जीने की आशा से बोलाः—

चतुर मनुष्यों की आपत्ति का नाश करने के लिए अच्छे मित्र ज़रूर बनाने चाहिए, जिसके मित्र नहीं होते वह कभी मुसीबत के पार नहीं हुआ करता।

हिरण्यक बोला, प्यारे! तुम तो नीति-शास्त्र के जानने वाले चतुर हो, तुम ऐसे जाल में क्यों फँस गये? वह बोला, मित्र! समय विवाद का नहीं है सो जब तक वह दुष्ट शिकारी न आवे तब तक जल्दी मेरे पैरों की फाँसी काटो। यह सुन हिरण्यक हँस कर बोला, क्या मेरे आने पर भी शिकारी से डरता है? अब शास्त्र से मुझे बड़ा वैराग्य हुआ है, जो आप जैसे भी नीति-शास्त्र के जानने वाले, ऐसी

दशा को प्राप्त होते हैं, इस कारण आपसे पूछता हूँ। वह बोला, मित्र ! कर्म से बुद्धि नष्ट हो जाती है।

काल के जाल में फँसे हुओं की और दैव से मारे हुए चित्त वाले महात्माओं की भी बुद्धि जाती रहती है।

विधाता ने जो अक्षर-माला मस्तक में लिख दी है, उसको कोई भी मेट नहीं सकता।

इस तरह उन दोनों के बात चीत करते हुए मित्र के दुःख से दुःखी हुआ मन्थरक भी धीरे धीरे वहाँ आ पहुँचा। उसको देख कर लघुपतनक हिरण्यक से बोला, अहो ! यह अच्छा न हुआ। हिरण्यक ने कहा, क्या वह शिकारी आया ? वह बोला, शिकारी की बात तो रहने दो, यह मन्थरक आता है। इसने अच्छा नहीं किया, इसके कारण हम भी ज़रूर मारे जावेंगे। अगर वह दुष्ट शिकारी आ गया तो मैं तो आकाश में उड़ जाऊँगा, तू बिल में घुस जायगा, चित्रांग भाग जायगा इस जलचर की क्या दशा होगी ? इस कारण मैं घबरा रहा हूँ। इतने ही में मन्थरक पास ही आ पहुँचा। हिरण्यक ने कहा, प्यारे ! तुमने अच्छा नहीं किया, जो यहाँ आ गये। तुम जल्दी चले जाओ, जब तक वह दुष्ट शिकारी न

आ आवे। मन्थरक बोला, मित्र! मैं क्या करूँ। वहाँ रहता हुआ मैं मित्र के दुख-रूपी अग्नि-दाह को सह न सका, इसी कारण मैं यहाँ आ गया हूँ। यह अच्छा कहा है—

प्यारों की जुदाई और धन की जुदाई कौन सह सकता है जो बड़ी दवाई के समान प्रिय जन का संग न हो।

प्राण छोड़ देना अच्छा है पर आप जैसों का वियोग अच्छा नहीं। प्राण तो दूसरे जन्म में मिल जाते हैं पर आप जैसे मित्र नहीं मिल सकते।

इस तरह उनके कहते ही कानों तक धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाये हुए शिकारी भी आ पहुँचा। उसको देखते ही फ़ौरन चूहे ने जाल की डोरी काट दी। चित्रांग फ़ौरन ही पीछे को देखता हुआ भागा, लघुपतनक पेड़ पर चढ़ गया, हिरण्यक पास के बिल में घुस गया तब वह शिकारी हिरन के भाग जाने से दुःखी हुआ धीरे धीरे जाते हुए मन्थरक को देखकर सोचने लगा। यद्यपि विधाता ने हिरन को हर लिया है तो भी यह मन्थरक भोजन के लिए काफ़ी होगा। आज इसी के मांस से कुटुम्ब का भोजन चलेगा। ऐसा विचार कर, उसको कुशों से बांध कर, धनुष

पर चढ़ा कंधे पर रख कर घर की ओर चला। उस समय उसको ले जाता हुआ देख कर हिरण्यक दुःख से व्याकुल हो, विलाप करने लगा कि हा! बड़े दुःख की बात हुई।

समुद्र की नाईं जब तक एक दुःख के पार नहीं होने पाया तब तक दूसरे ने आ घेरा। छिद्रों में विपत्तियाँ बहुत हुआ करती हैं।

तभी तक कोई नहीं गिरता जब तक एक सी ज़मीन में चलता रहता है और जब गिरता है तब ज़रा ज़रा सी देर में बड़ी बड़ी विपत्तियाँ आ घेरा करती हैं।

जो नम्र तथा सरल होता है वह आपत्ति में भी नहीं घबराता। अच्छी जाति का धनुष, मित्र और स्त्री दुर्लभ हैं, ये आपत्ति में नहीं घबराते।

माता, स्त्री, सगे भाई तथा पुत्र में भी ऐसा विश्वास नहीं होता जैसा मित्र में हुआ करता है।

जो दैव ने मेरा धन नाश कर दिया है तो रास्ते में थके हुए, आराम करते हुए मेरे मित्र को क्यों छीन लिया, मन्थरक के समान कोई दूसरा मित्र न होगा। कहा गया है—

ग़रीबी होने पर मित्र से धन मिलता है, छिपी

बात कही जाती है ? और मित्र से आपत्ति दूर होती है, ये मित्रता के तीन फल हैं।

सो इससे बढ़ कर मेरा और कोई मित्र नहीं है। विधाता मेरे ऊपर लगातार दुःख रूपी बाणों की वर्षा क्यों करता है ? हा खेद है ! पहले तो धन का नाश, फिर कुटुम्बियों का नाश, फिर देश-त्याग और अब मित्र से जुदाई हुई। अथवा सब जीव-धारियों के जीवन-धर्म का यह लक्षण ही कहा गया है—

शरीर क्षण भर में नष्ट होने वाला है, सम्पत्ति क्षण भर में नाश होने वाली है और सब देहधारियों का संयोग, वियोग वाला है।

घाव हुई जगह में बार बार चोट लगती है, धन का नाश होने पर भूख बढ़ जाती है, आपत्ति पड़ने पर वैरी जाग उठते हैं, छिद्र में अनेक अनर्थ होते हैं। अहो ! किसी ने यह अच्छा कहा है—

भय के होने पर रक्षा, प्रीति और विश्राम के पात्र 'मित्र, ये रत्न-रूपी दो अक्षर किसने बनाये हैं।

इसी मौक़े पर रोते हुए चित्रांग और लघुपतनक भी वहाँ आ गये। तब हिरण्यक बोला, फ़िज़ूल रोने से क्या है। इस मन्थरक को जब तक नज़र की

ओट में शिकारी न ले जावे तब तक इसके छुटाने का उपाय करो।

जो दुःख के समय सिर्फ़ रोया ही करता है, उपाय नहीं करता, उसका रोना ही बढ़ता है। वह दुःख दूर नहीं कर सकता।

नीति के जानने वालों ने विपत्ति की मुख्य एक ही दवा बतलाई है कि उस दुःख के नाश का उपाय करना और रंज को त्यागना।

इकट्ठा किये धन की रक्षा के लिए और आने वाले लाभ के लिए और आई हुई आपत्ति को दूर करने की जो सम्मति करता है वही परम मंत्र है।

यह सुन कर कौवा बोला, भाई! यदि ऐसा है तो मेरा कहना मानो। यह चित्रांग शिकारी रास्ते पर जाकर, किसी छोटे तालाब के पास पहुँच कर उसके पास निश्चेतन हो गिर पड़े तो मैं इसके सिर पर चढ़ कर धीरे धीरे चोंच से कुरेदूँगा, जिससे यह दुष्ट शिकारी चोंच के कुरेदने से इसको मरा हुआ जान कर और पृथिवी पर छोड़ कर हिरन के लिए दौड़ेगा। इसी अवसर में तुम कुश के जाल के टुकड़े कर देना, जिससे यह मन्थरक जल्दी से पानी में घुस जायगा। चित्रांग ने कहा, भाई! तुमने

अच्छा उपाय सोचा अब मन्थरक को छुटा हुआ ही समझो। क्योंकि—

काम बनेगा या नहीं, इसका चित्त का उत्साह ही पहले से सब प्राणियों को सूचना दे देता है, बुद्धिमान् उसको समझ लेते हैं दूसरे नहीं।

अब ऐसा ही करो। वैसा ही करने पर उस शिकारी ने उसी तरह से तालाब के किनारे चित्रांग को कौए सहित देखा। उसको देख कर प्रसन्न हो विचारने लगा, ज़रूर जाल में फँसने के दुःख से यह कुछ बाक़ी जीवन वाला, जाल काट कर किसी तरह से इस वन में ज्योंही गया त्योंही मर गया। यह कछुआ अच्छी तरह से बंधा होने के कारण मेरे वश में है। अब इस मृग को भी पकड़ लूँ। ऐसा विचार कर कछुए को ज़मीन पर पटक कर हिरन की ओर दौड़ा। इसी बीच में हिरण्यक ने वज्र के समान दाढ़ों से उस कुश के बंधन के टुकड़े टुकड़े कर दिये। मन्थरक बंधन से निकल कर पास के तालाब में घुस गया। चित्रांग भी, शिकारी के पास न पहुँचने से पूर्व ही पृथिवी से उठ कर कौवे के साथ भाग गया। इस आश्चर्य-युक्त दुःख में पड़ कर शिकारी वापस आकर देखता

है कि कछुआ भी वहाँ नहीं है। तब वहाँ बैठ कर उसने अनेक तरह से विलाप किया और अपने घर को चला गया।

तब शिकारी के बहुत दूर चले जाने पर कौआ कछुआ, हरिन और चूहा, बड़ा आनन्द पा कर, आपस में मिल कर, अपने को फिर पैदा हुआ जान कर, उसी अपने तालाब पर पहुँच कर, बड़े आनन्द के साथ अच्छी अच्छी बातें कर समय बिताने लगे।

ऐसा जान कर बुद्धिमान् को मित्रों का संग्रह करना चाहिए, मित्र के साथ कपट से न वर्त्तना चाहिए। क्योंकि—

जो इस संसार में मित्र बनाता है और उनके साथ कुटिल व्यवहार नहीं करता वह उनके साथ रहता हुआ कभी दुःख नहीं पाता।

काकोलूकीय

तीसरा तन्त्र

काकोलूकीय तीसरे तन्त्र के प्रारम्भ में यह कहा गया है कि—

पहले विरोध करने वाले और बाद में मित्रता करने वाले का विश्वास न करना चाहिए एक गुफा में बहुत से उल्लू रहते थे, उसमें कौवे ने आग लगा दी थी।

यह इस तरह सुना जाता है कि क्षपणक देश में एक महिलारोप्य नाम का नगर था। वहाँ बड़ी बड़ी डालियों और पत्तों वाला एक बड़ा बरगद का वृक्ष था। उस पर मेघवर्ण नाम कौओं का राजा बहुत से कौओं के साथ क़िला बना कर रहता था। और दूसरा अरिमर्दन नाम उल्लुओं का राजा अनगिनत उल्लुओं के साथ पर्वत की गुफ़ा में क़िला बनाये हुए रहा करता था। उल्लू रात को सदा

बर्गद के वृक्ष के चारों ओर आकर घूमा करता था और पूर्व विरोध के कारण जिस कौवे को पाता उसी को मार देता था। इस तरह धीरे धीरे उसने उस बर्गद के वृक्ष को बिना कौओं के कर दिया क्योंकि—

बढ़े हुए शत्रु की तथा रोग की जो अपनी इच्छा से लापरवाही करता है और आलसी बना रहता है वह धीरे धीरे उनसे मारा जाता है। और जो पैदा होते ही शत्रु और रोग को दबा नहीं देता वह बलवान् होने पर भी पीछे उन्हीं से मारा जाता है।

तब एक दिन वह कौओं का राजा सब मन्त्री कौओं को बुला कर बोला, अरे भाई! हमारा शत्रु तो बड़ा बली तथा उद्यमशील है। रात को रोज़ आ कर हमारी जाति का नाश किया करता है। इसका क्या इलाज होना चाहिए? हम तो रात में देख नहीं सकते और दिन में उसके क़िले को नहीं जानते जिससे जाकर हमला करें। अब इस विषय में क्या करना चाहिए? विचार कर जल्दी बतलाओ। तब मन्त्री कहने लगे कि आपने अच्छा किया जो ऐसा प्रश्न किया।

तब वह मेघवर्ण पाँचों मन्त्रियों से क्रमपूर्वक एक एक से पूछने लगा, हे भाई! ऐसा मौका आ जाने पर आप क्या मानते हैं एक बोला, हे राजा! बलवान् के साथ विग्रह करना ठीक नहीं है क्योंकि बलवान् मौका आने पर चढ़ाई कर बैठता है। कहा है—

धर्मात्मा, श्रेष्ठ, बहुत भाइयों वाला, बली और बहुत लड़ाइयों का जीतने वाला शत्रु त्यागना चाहिए अर्थात् उससे लड़ाई न करे।

प्राणों की शंका होने पर अनाड़ी के साथ भी सन्धि (मेल) करना चाहिए क्योंकि प्राणों की रक्षा से सब की रक्षा होती है।

यह बहुत विजय कर चुका है इस कारण उस से सन्धि कर लो। अनेक युद्ध-विजयी की जिस से सन्धि हो जाती है उसके प्रभाव से बहुत से शत्रु उसके अधीन हो जाते हैं।

समर्थ के साथ दुर्बल का युद्ध मौत के लिए ही होता है। जिस तरह ज़ोरावर पत्थर घड़े के समान दुर्बल को तोड़ कर आप बना रहता है।

पृथ्वी, मित्र और सोना, ये तीन लड़ाई के फल हैं। जो इनमें से एक भी न हो तो लड़ना न चाहिए।

सिंह यदि पत्थर से बने हुए चूहे के बिल को खोदे तो या तो नाख़ून टूट जाते हैं या सिर्फ़ चूहा ही मिलता है और कुछ नहीं।

बलवान् के साथ युद्ध करना चाहिए, इसमें कोई दृष्टान्त नहीं मिलता। मेघ हवा के सामने कभी नहीं आते।

इस तरह उपजीवी मंत्री ने साम मन्त्र से सन्धि करना बतलाया। इसके बाद मेघवर्ण ने संजीवी से पूछा, उसने उत्तर दिया, देव! मुझे यह बात अच्छी नहीं लगती कि शत्रु के साथ मेल किया जावे।

अच्छी तरह मेल करने वाले भी शत्रु के साथ मेल न करे क्योंकि गरम पानी भी आग को बुझा ही देता है।

वह क्रूर, अत्यन्त लालची और अधर्मी है। ख़ास कर वह मेल करने योग्य नहीं है। कहा गया है कि—

सत्य और धर्म से हीन के साथ मेल न करना चाहिए। अच्छी तरह मेल करने पर भी जल्दी ही बदल जाता है।

इससे उसके साथ लड़ना चाहिए, यह मेरी राय है, कहा है कि—

खोटा, लोभी, आलसी, झूठ बोलने वाला, प्रमादी, डरपोक, चंचल, मूर्ख, युद्ध में उत्साह न करने वाला, शत्रु सुख से मारने के योग्य होता है।

उसने हमारा तिरस्कार किया है, सो यदि मेल करने की बात कहेंगे तो वह और भी क्रोध करेगा।

क्रोधित शत्रु से शान्ति के वचन कहना उसके क्रोध का बढ़ाना है और गरम घी में एक साथ जल का छींटा देने के बराबर है।

मृत्यु के समान बड़ी सज़ा देने वाले राजा के वश में शत्रु हो जाते हैं और दयालु राजा को शत्रु तिनके के समान मानने लगते हैं।

जिसका तेज, तेजस्वी के तेज से दब जाता है उस माता का यौवन हरने वाले के वृथा उत्पन्न होने से क्या लाभ है?

शत्रु के ख़ून से तथा शत्रुओं की स्त्रियों के आँसुओं से जिस राजा की भूमि नहीं सींची गई उसके जीने की क्या तारीफ़ है?

इस तरह संजीवी ने लड़ाई करने की सलाह दी। बाद में मेघवर्ण ने अनुजीवी मन्त्री से पूछा, भाई! तुम भी अपनी राय बतलाओ। उसने कहा,

देव ! वह दुष्ट, अधिक बली और मर्यादा-रहित है। उसके साथ संधि और विग्रह ठीक नहीं; यान ही ठीक है।

यान दो प्रकार का होता है, एक तो भय से व्याकुल हुए की रक्षा करना, दूसरे जीतने की इच्छा करने वाले को शत्रु की ओर जाना।

बलवान् शत्रु को देख कर जो देश त्यागता है वह युधिष्ठिर के समान जीते जी ही पृथ्वी को पाता है।

इसलिए, बलवान् से लड़ने के लिए यह तुम्हारे जाने का ही समय है, संधि विग्रह का नहीं। इस तरह अनुजीवी की राय हुई।

इसके बाद मेघवर्ण ने प्रजीवी से पूछा, भाई! तुम भी राय बतलाओ। वह बोला, देव! मुझे संधि, विग्रह और यान तीनों ही अच्छे नहीं मालूम होते, मुझे तो आसन (अपने ही स्थान पर रहना) अच्छा मालूम होता है।

अपनी जगह रहता हुआ मगर गजेन्द्र (हाथी) को भी खींच लेता है और अपने स्थान से अलग हुआ वही कुत्ते तक से तिरस्कार पाता है।

दाढ़ से रहित [illegible] मद से रहित हाथी,

वैसे ही स्थान से अलग हुआ राजा सब से तिरस्कार पाता है।

अपनी जगह रहता हुआ अकेला ही सौ समर्थ शत्रुओं को युद्ध में सह सकता है। इससे अपना स्थान न छोड़ना चाहिए।

इस प्रकार प्रजीवी की राय होने के बाद यह चिरंजीवी से बोला, भद्र! तुम भी अपनी राय बतलाओ, यह बोला, देव! संधि आदि में से संश्रय (बलवान से अभियुक्त हो प्रबल का आश्रय करना) ही मुझे ठीक प्रतीत होता है। संश्रय ही करना चाहिए। कहा है—

समर्थ और तेजस्वी यदि असहाय हो तो क्या कर सकता है। जहाँ हवा नहीं होती वहाँ जलती हुई आग अपने आप बुझ जाती है।

मनुष्य को अपने पक्ष की संगति करना विशेष कर कल्याण-कारक है, बिना भूसी के चावल कभी उगते नहीं।

इसलिए यहीं रहते हुए आप किसी समर्थ का सहारा लें, जो विपत्ति का इलाज करे और जो आप स्थान छोड़ कर दूसरी जगह चले जावेंगे तो कोई आपकी सहायता न करेगा। कहा है कि—

वन के जलाने में आग को हवा सहायता देती है, दीवे को वही बुझा देती है। दुर्बलता में कौन किसका मित्र है।

और यही सिद्धान्त नहीं है कि बली का ही आश्रय किया जावे। रक्षा के लिए छोटों का भी आश्रय होता है।

और जो बड़ों का आश्रय हो तब तो कहना ही क्या है। कहा है कि—

बड़ों का साथ किसको ऊँचा नहीं बनाता। कमल के पत्ते पर पड़ी हुई जल की बूँद मोती के समान कान्ति धारण करती है।

इसलिए संश्रय के बिना किसी की दवा नहीं होती। इससे संश्रय करना चाहिए, यही मेरी राय है।

इसके बाद मेघवर्ण राजा ने, पिता के पुराने मंत्री, बड़ी उम्र वाले, सब नीति शास्त्रों के जानने वाले स्थिरजीवी से प्रणाम करके कहा, हे तात ! आपके सामने मैंने इतने मन्त्रियों से पूछा है, वह परीक्षा के लिए है। आपने सुना है; जो मेरे योग्य हो सो मुझे बतलाइए। वह बोला, प्यारे ! इन सभी मन्त्रियों ने नीतिशास्त्र का आश्रय कहा है। वह अपने अपने समय के अनुसार सब ही ठीक है। परन्तु

यह द्वैधीभाव (सन्देह युक्त होकर स्थिर रहना) का समय है। कहा गया है—

संधि और विग्रह में सदा अविश्वास से स्थित रहे, किन्तु प्रबल शत्रु में द्वैधीभाव को प्राप्त हो कर अविश्वासी न रहे, द्वैधीभाव से शत्रु जीते जाते हैं।

शत्रु को विश्वास देकर लोभ के दिखाने वाले अविश्वासियों से शत्रु सुखपूर्वक नष्ट हो जाते हैं।

सो द्वैधीभाव को प्राप्त हो कर तुम इसी स्थान में रहोगे और लोभ के आश्रय से शत्रु को भगा सकोगे और किसी प्रकार का उसका छिद्र देखो तो उसको मार सकोगे। मेघवर्ण ने कहा, तात ! मुझे उसके आश्रय की ख़बर नहीं, उसका छिद्र किस प्रकार जानूँ। स्थिरजीवी बोला, प्यारे ! स्थान ही नहीं बल्कि उसका छिद्र भी दूतों के द्वारा प्रकट करूँगा। कहा है—

गौ गन्ध से देखा करती हैं, ब्राह्मण वेद से देखते हैं, राजा दूतों से देखते हैं और दूसरे मनुष्य आँखों से देखा करते हैं।

इस प्रकार उस बूढ़े मंत्री के वचन सुन कर मेघवर्ण बोला, तात ! कौवा और उल्लू का प्राणहारी सदा का वैर किस लिए है ? मंत्री ने

कहा, प्यारे ! एक समय हंस और तोते आदि बहुत से पक्षी इकट्ठा हो कर दुख से सम्मति करने लगे कि हमारे राजा गरुड़ हैं। वे वासुदेव के भक्त हैं। वे हमारी कुछ भी चिन्ता नहीं करते। ऐसे राजा से क्या जो शिकारी के जाल से बँधे हुए हमारी रक्षा नहीं करता। कहा है—

शत्रुओं से सताये हुए नौकरों की तथा भय से डरे हुओं की जो रक्षा नहीं करता वह राजा निस्सन्देह कालरूप होता है।

जो राजा अच्छी तरह शिक्षा करने वाला न हो तो प्रजा, विना मल्लाह के सागर में नाव की तरह चलायमान होती है।

अब विचार कर और कोई पक्षियों का राजा बनाओ। तब उन सबने अच्छे अच्छे अंग वाले उल्लू को देख कर कहा, कि यह हमारा राजा बनेगा। राजतिलक के लिए सामान लाओ। तब तिलक होने की विधि के साथ तैयारी हुई और उल्लू के सिंहासन पर बैठते ही गुस्से में भरा हुआ एक कौवा आया। वह सोचने लगा। क्या आज सब पक्षियों के मिलने का उत्सव है। तब सब पक्षी उस कौवे को देख कर कहने लगे कि पक्षियों में कौवा सब

से अधिक चतुर सुना जाता है। इसकी भी राय लेनी चाहिए। तब कौवा उनसे मिल कर बोला, क्या यह बड़ा उत्सव मिलने का है। वे बोले कि पक्षियों का कोई राजा नहीं है, इस उल्लू का सबने सत्कार करके राजतिलक का प्रबन्ध किया है। आप भी अपनी राय दीजिए। तब हँस कर कौवा बोला, अहो! यह तो ठीक नहीं है जो मोर, हंस आदि अच्छे पक्षियों की विद्यमानता में, दिन में अंधा रहने वाले इसके भयानक मुँह का तिलक करते हो, मेरी राय इसके खिलाफ़ है।

राजा गरुड़ के होते हुए इस अंधे को राजा क्यों बनाया जाता है। यदि गुणवान् हो तो भी एक राजा के होते हुए दूसरा राजा बनाना ठीक नहीं है।

तेजस्वी राजा एक ही पृथिवी की रक्षा के लिए बनाया जाता है। बहुत राजाओं के होने पर, आपस के द्वेष से प्रजा का नाश होता है।

गरुड़ के नाम से ही शत्रु तुम्हारा कुछ न कर सकेंगे। क्योंकि—

अपने बड़े मालिक का नाम लेने से ही दुष्टों के आगे उसी समय कल्याण हो जाता है।

और, बड़े पुरुषों का नाम लेने ही से
कामयाबी हो जाती है। चन्द्रमा का नाम लेने
ख़रगोश बड़े सुखी हुए थे। वे बोले, यह कै
उसने कहा—

१—ख़रगोश और हाथी की कहान

एक वन में चतुर्दन्त नाम का एक हा
हाथियों का राजा रहता था। वहाँ एक बार ब
वर्ष तक वर्षा न हुई, जिससे सब तालाब सू
गये। तब एक बार सब हाथियों ने मिल कर रा
से कहा, देव! प्यास के मारे हाथियों के ब
कुछ तो अनक़रीब मरने के हैं, कुछ मर चुके हैं
इसलिए कोई ऐसा दरिया खोजना चाहिए जहा
पानी पी कर सुख मिले। तब बहुत देर तक सोच
कर उसने कहा, एक बड़ा तालाब है, वह सदा
पानी से भरा रहता है। वहाँ चलो। तब वे सब
पाँच दिन में वहाँ पहुँचे। उसमें अच्छी तरह पानी
पी कर शाम को वहाँ से वापस चले। तब तालाब
के चारों ओर ख़रगोशों के असंख्य बिल बने हुए
थे। वे हाथियों के इधर उधर घूमने से सब टूट
गये और बहुत से ख़रगोशों के तो पैर टूट गये,

किसी का सिर टूटा और किसी की गर्दन टूटी और कोई अधमरे हो गये और कोई कोई मर भी गये।

जब वे हाथी वहाँ से चले गये तब सब ख़रगोशों ने इकट्ठा होकर आपस में सलाह की कि हम सब, हाथियों के रोज़ यहाँ आने से मर जायेंगे। इसलिए कोई इनसे बचने का उपाय सोचो। तब उनमें से एक बोला, इस जगह को छोड़ कर चले जाओ और क्या उपाय है। मनु और व्यास ने कहा है—

कुल के लिए एक को छोड़ दे, गाँव के लिए कुल को, देश के लिए गाँव को, और अपने लिए पृथिवी को ही छोड़ देवे।

आपत्ति के लिए धन की रक्षा करे, धन से स्त्री की रक्षा करे, अपनी सब तरह से रक्षा करे।

तब और बोले, अरे! वंश परम्परा के स्थान को एक साथ छोड़ देना अच्छा नहीं है। उनको किसी प्रकार का भय देना चाहिए जो किसी प्रकार यहाँ न आवें क्योंकि—

बिना विष के साँप को भी बड़ा फन करना चाहिए, विष हो या न हो, फणाटोप भयंकर होता है।

तब उनमें से एक और बोला, जो ऐसा है ...
यह स्थान उनके लिए बड़े डर का है जिससे ...
कभी न आवेंगे। वह भयातुर दूत के ...
है। जो कि विजयदत्त नाम का हमारा रा...
ख़रगोश चन्द्रमण्डल में रहता है। इसलिए ...
फ़र्ज़ी दूत को गजराज के पास भेजो कि च...
तुमको इस तालाब पर आने के लिए मने क...
है, क्योंकि इसके चारों ओर हमारा सहारा र...
वाले ख़रगोश रहते हैं। ऐसा कहने से विश्वास मा...
कर शायद वह न आवे। और बोले, जो ऐसा है ...
तो यहाँ लम्बकर्ण नाम का ख़रगोश रहता है ...
बात बनाने में चतुर और दूत का काम जान...
वाला है, इसी को वहाँ भेजो। इस तरह इस दु...
से छुटकारा हो सकता है। तब और बोले, अ...
यह तो ठीक है, दूसरा कोई उपाय हमारे ...
का नहीं है, सो यही करो। तब लम्बकर्ण को ...
गजराज के पास भेजा। लम्बकर्ण ने जा कर ...
अरे दुष्ट गज! इस प्रकार निश्शंक हो तू ...
चन्द्रमा के तालाब पर क्यों आता है, चला जा ...
यह सुन आश्चर्य करके हाथी बोला, अरे! तू ...
कौन है? वह बोला, लम्बकर्ण नाम का ख़रगोश हूँ ...

चन्द्रमण्डल में रहता हूँ। इस समय भगवान् चन्द्रमा ने मुझे दूत बना कर तुम्हारे पास भेजा है। तुम जानते हो कि सच कहने वाले दूत का पाप नहीं होता। सब राजा दूत-मुख वाले होते हैं।

यह सुन कर वह बोला, अरे खरगोश! भगवान् चन्द्रमा का सन्देशा कहो जिससे जल्दी किया जावे। वह बोला, कल आपने अपने साथियों के साथ बहुत से खरगोश मार दिये हैं। क्या आप नहीं जानते कि यह मेरा कुटुम्ब है। यदि तुम जीना चाहते हो तो फिर इस तालाब पर न आना। यही सन्देशा है। हाथी बोला, अब स्वामी चन्द्रमा कहाँ हैं? उसने कहा, इसी तालाब में। तुम्हारे पैरों के कुचलने से जो खरगोश बाक़ी बचे हैं उनको समझाने के लिए आये हैं, और मुझे तुम्हारे पास भेजा है। हाथी ने कहा, उनके दर्शन मुझे कराओ ताकि उनको प्रणाम कर के दूसरी जगह जाऊँ। खरगोश ने कहा, मेरे साथ अकेले चलो, मैं तुमको दर्शन कराऊँगा। ऐसा विचार कर उसको रात में ले जा कर जल में चन्द्रमा की परछाईं दिखा दी। और कहा, ये हमारे स्वामी जल के बीच में समाधि साधे हुए हैं। इनको प्रणाम

कर जल्दी चले जाओ, नहीं तो समाधि में भङ्ग होने से फिर बड़ा क्रोध करेंगे। तब हाथी उसको प्रणाम कर के चला गया। ख़रगोश उस दिन से परिवार के सहित सुख से रहने लगा। इससे मैं कहता हूँ कि बड़ों का नाम लेने से बड़े काम बनते हैं। चन्द्रमा के नाम से ख़रगोश सुख से रहने लगे।

दूसरी बात यह है कि जो नीचता करता हो, आलसी रहता हो, दुश्मन को आता देख डर जाता हो, बुरी बुरी आदतों में फँसा हुआ हो, किये हुए उपकार का माननेवाला न हो और पीछे बुराई करने वाला हो, तो ऐसे पुरुष को जीवन चाहने वाला कभी स्वामी न बनावे।

कौवे के इस तरह वचन सुन कर सब पक्षियों ने कहा, राजा के लिए फिर इकट्ठा होकर सलाह करेंगे। इतना कह कर वे तो अपनी अपनी जगह चले गये। सिर्फ़ उल्लू ही कृकालिका के साथ तिलक की आशा में आसन पर बैठा रहा। कुछ देर में वह बोला, अरे! कोई यहाँ है? मेरा तिलक अब तक क्यों नहीं किया? कृकालिका ने कहा, भद्र! तुम्हारे तिलक में कौवे ने विघ्न कर दिया है। पक्षी सब चले

ये। सिर्फ़ यह कौवा ही किसी काम से यहाँ बैठा हुआ है। अब जल्दी उठो, ताकि मैं तुमको तुम्हारे घर पहुँचा दूँ। यह सुन कर दुःख से उल्लू कौवे से बोला, अरे दुष्ट! तेरा मैंने क्या नुक़सान किया है जो तूने मेरे तिलक में नुक़सान पहुँचाया। तूने हमारा तिलक नहीं होने दिया। इस से तेरे कुल के साथ आज से मेरा बैर हो गया। कहा है—

बाण से बींधा हुआ और तलवार से काटा हुआ भी वृक्ष आदि फिर उग आता है। शस्त्र के घाव भर जाते हैं, परन्तु बुरी बात के घाव फिर नहीं भरते।

यह कह कृकालिका के साथ अपने घर को चला गया। तब डर कर कौवा विचारने लगा, अहो! मैंने बिना ही कारण बैर बाँधा, मैंने यह क्या कह दिया?

देश काल को न जानने वाला, जिसका नतीजा बुरा है, जो अप्रिय है और अपने को छोटा बनाने वाला है ऐसा जो कारणरहित वचन बोलता है वह वचन नहीं किन्तु विष है।

बुद्धिमान् मनुष्य बल को पा कर भी ख़ुद दूसरे

को अपना शत्रु न बना लेवे। "मेरा वैद्य है" ऐसा विचार कर कोई बिना कारण विष नहीं खाता।

पंडित को सभा में दूसरे की बुराई किसी प्रकार करना अच्छा नहीं है। जो कहने से दूसरे को बुरा लगे तो वह सच होने पर भी न कहे।

दोस्त और अच्छे पुरुषों से बार बार विचार कर तथा अपनी बुद्धि से विचार कर जो कार्य करता है वही बुद्धिमान् है, वही लक्ष्मी और बड़ाई पाता है।

ऐसा विचार कर कौवा भी चला गया। उसी दिन से हमारा उल्लुओं के साथ वंश-क्रमागत वैर है। मेघवर्ण ने कहा, तात! ऐसा होने में हमको क्या करना चाहिए? वह बोला, प्यारे! ऐसा होने में भी संधि आदि के सिवा एक दूसरी बड़ी चतुराई है। उसको स्वीकार करो। मैं खुद ही विजय के लिए जाऊँगा और शत्रु को मारूँगा।

अब इस विषय में मुझे कुछ कहना है। उसे सुनो और उक्त अनुष्ठान करो। मेघवर्ण बोला, हुक्म दीजिए। आपके कहने के अनुसार ही किया जावेगा। स्थिरजीवी बोला, प्यारे! सुनो, जो साम आदि उपायों को छोड़ कर मैंने पाँचवाँ उपाय

बतलाया है। तू मुझे शत्रु जान कर कठोर वचनों से झुड़क, जिससे शत्रु के दूतों को विश्वास हो जावे और कहीं से लाये हुए रुधिर से सान कर इसी वृक्ष के नीचे मुझे डाल दे। और तू ऋष्यमूक पर्वत के पास जाकर वहाँ परिवार के सहित ठहर। तब तक मैं सब शत्रुओं को अपने आचरण की विधि से विश्वासी बना लूँगा और उन दुष्टों के क़िले में आ कर दिन में उन अंधों को मार डालूँगा। मैंने अच्छी तरह जान लिया है, मेरा काम पूरा होगा। क्योंकि यह क़िला अपसार-रहित केवल मारने के लिए होगा। कहा है कि—

नीति जानने वालों ने निकलने के उपाय वाले ही क़िले की प्रशंसा की है। अपसार (निकलने के रास्ते) के बिना क़िला जेलख़ाने के समान है।

मुझे मेरे लिए कृपा नहीं करनी चाहिए। कहा है—

प्राणों के समान प्यारे, पालित और लालित नौकरों को युद्ध के लिए, सूखी लकड़ी को आग में डालने के समान प्रेरणा करे। और नौकरों की प्राण की नाईं रक्षा भी करे, अपने शरीर की नाईं पुष्ट करे, यह इसी एक दिन के लिए है जब शत्रु से मुक़ाबिला हो।

सो तुम इस विषय में मुझे रोकना मत। ऐसा कह कर उसके साथ बनावटी वैर करना शुरू किया। तब उसके दूसरे नौकर स्थिरजीवी को उजड्डता के वचन कहते देख कर उसे मारने को तैयार हुए। तब मेघवर्ण ने उनसे कहा, अरे! तुम अलग रहो, मैं ही इस शत्रु के पक्षपाती को क़ाबू में करूँगा। ऐसा कह उसके ऊपर चढ़ कर, धीरे धीरे चोंच मार कर, लाये हुए रुधिर से उसको सान कर, उसके बतलाये हुए ऋष्यमूक पर्वत पर परिवार सहित चला गया। इसी मौक़े पर कृकालिका शत्रु के दूत ने उस मेघवर्ण के मन्त्री का दुख उल्लू राजा के आगे कह दिया कि तुम्हारा शत्रु इस समय डरा हुआ, परिवार सहित कहीं चला गया है। तब उल्लूराज यह सुन कर सूर्य के छिपने के समय मन्त्री और परिवार के साथ कौवे को मारने के लिए चला, और सबसे बोला, जल्दी करो। डरा हुआ शत्रु भागने की इच्छा वाला पुण्य से ही मिलता है।

वह इस तरह कह कर बर्गद के वृक्ष को चारों ओर से घेर कर खड़ा हुआ। जब कोई कौवा न देख पड़ा तब वृक्ष की डाली पर चढ़ कर, प्रसन्न हो, साथियों से बोला, अरे! उनका रास्ता मालूम करो कि किस

रास्ते से कौवे भागे हैं। जब तक वे किसी किले में न पहुचने पावें उससे पहले ही उनके पीछे जा कर उनको मार डालूँ।

तब स्थिरजीवी सोचने लगा। हमारा हाल न जानने वाले ये हमारे शत्रु, अपनी इच्छा के अनुसार चले जावेंगे तो हमारा तो कुछ भी काम न बना। क्योंकि—

बुद्धिमान् पहले तो काम को छेड़ते ही नहीं, और छेड़ते हैं तो पूरा करते हैं। इसलिए आरम्भ न करना तो अच्छा है परन्तु आरम्भ करके उसको छोड़ना अच्छा नहीं। इससे मैं शब्द सुना कर अपने को दिखाऊँ। यह विचार कर धीरे धीरे शब्द करने लगा। उसकी आवाज़ सुनते ही वे सब उल्लू उसको मारने के लिए दौड़े। तब उसने कहा अरे भाई! मैं स्थिरजीवी नाम मेघवर्ण का मन्त्री हूँ मेघवर्ण ने मेरी यह दशा कर दी। तुम अपने स्वामी के आगे कहो। उससे बहुत कुछ कहना है। तब उन्होंने उल्लू-राज से कहा। उल्लू-राज बड़ा अचम्भित होकर, उसके पास जाकर बोला, अरे! तू ऐसी हालत को कैसे पहुँचा? बतला। वह बोला, देव! इसका हाल सुनो, पिछले दिन वह दुरात्मा

मेघवर्ण तुम्हारे मारे हुए बहुत कौवों के दुःख से गुस्से में भरकर तुमसे लड़ने को तैयार हुआ। तब मैंने कहा, स्वामी! तुमको उन पर चढ़ाई करना ठीक नहीं, वह बली है और हम बलहीन हैं। इससे उसको भेट देकर मेल करना अच्छा है।

यह हाल सुन कर उस दुर्जन ने क्रोध कर के मुझको तुम्हारी ओर का समझ कर मेरी यह दशा कर दी। इस समय तुम्हारा ही सहारा है। बहुत क्या कहूँ, जब मैं चलने के योग्य हूँगा तब तुमको उसके स्थान पर ले जाकर सब कौवों का नाश करा दूँगा। तब अरिमर्दन यह वचन सुन कर पुराने मन्त्रियों के साथ सलाह करने लगा। रक्ताक्ष, क्रूराक्ष, दीप्ताक्ष चक्रनास और प्राकारकर्ण ये ५ उसके मन्त्री थे। शुरू में रक्ताक्ष से पूछा कि भद्र! यह उस शत्रु का मन्त्री मेरे हाथ लगा है, क्या किया जावे? रक्ताक्ष ने कहा, देव! किया क्या जावे? बिना विचारे इसे मार डालो। इसके मारने से तुम्हारा अकंटक राज्य होगा।

इसके बाद क्रूराक्ष मन्त्री से पूछा, भाई! तुम्हारी क्या राय है? वह बोला, देव! यह निर्दयता है जो इस मन्त्री ने कहा है। शरण में आये हुए को कोई नहीं मरता। यह सत्य कहा गया है कि—कबूतर ने

ो शरण में आये हुए शत्रु का यथायोग्य पूजन कर
पने मांस से निमन्त्रित किया। अरिमर्दन ने कहा,
ैसे ? वह बोला—

२—कबूतर और चिड़ीमार की कहानी

कोई बुरे आचार वाला, प्राणियों के लिए काल के समान, बड़ा चिड़ीमार वन में विचरता था। उसका न कोई मित्र, न कोई सम्बन्धी, न भाई था। सभी ने उसको बुरे काम करने से छोड़ दिया था।

वह सब प्राणियों का मारने वाला पिंजरा और लाठी लेकर वन को सदा जाया करता था।

एक दिन वन में घूमते घूमते एक कबूतरी हाथ लग गई। उसने उसको पिंजड़े में डाल लिया। तब उस वन की सब दिशायें बादलों के घिर आने से काली हो गईं। बड़े ज़ोर से हवा चली और ख़ूब पानी बरसा। तब वह डर कर काँपता हुआ बचाव के लिए एक वृक्ष के नीचे पहुँचा। जब थोड़ी देर में आकाश साफ़ हुआ तब वहीं पर बोला, जो कोई यहाँ पर हो, उसी की मैं शरण में आया हूँ। वह मेरी रक्षा करे। मैं जाड़े से सताया हुआ और भूख से व्याकुल हूँ।

उसी वृक्ष की एक डाली पर एक कबूतर

बहुत दिन से रहता था। वह अपनी स्त्री के बिना विलाप कर रहा था और बड़ा दुःखी था। कहता था कि आज ज़ोर से आँधी चली है और बड़ी वर्षा हुई है। आज मेरी प्यारी स्त्री नहीं आई है। आज मेरा घर उसके बिना सूना है।

वह पुरुष संसार में धन्य है जिसकी स्त्री पति-व्रता, (अपने ही पति को चाहने वाली) पति का प्राण, और अपने पति ही की भलाई में सदा रत रहने वाली है।

घर का नाम घर नहीं है किन्तु स्त्री का नाम ही घर है। स्त्री के बिना घर वन के समान है।

तब पिंजरे में पड़ी हुई कबूतरी उसके दुःख भरे वचन सुन कर इस तरह सन्तुष्ट होकर कहने लगी—

उसको स्त्री मत मानो जिससे स्वामी प्रसन्न नहीं होता। पति के प्रसन्न होने में स्त्रियों के सब देवता उस पर प्रसन्न हो जाते हैं।

वन की अग्नि से जली हुई फलों के गुच्छे वाली लता की नाईं वह स्त्री भस्म हो जाती है जिस पर स्वामी प्रसन्न नहीं होता।

पिता-माता और पुत्र परिमित सुख दिया करते हैं, पर पति अमित (बेशुमार) दान देने वाला होता

है। ऐसे पति की पूजा कौन न करे? और फिर कहा—

हे स्वामी! सावधान होकर सुनो। मैं तुम से हित के वचन कहती हूँ। शरण में आये हुए की प्राणों से भी अधिक रक्षा करनी चाहिए।

यह चिड़ीमार तुम्हारे घर पर आया हुआ सो रहा है। जाड़े और भूख से व्याकुल है। तुम इसका सत्कार करो।

सुना है कि—शाम के वक्त घर पर आये हुए अतिथि का जो सत्कार नहीं करता वह अतिथि गृहस्थी के पुण्य को लेकर अपना उसे पाप देकर चला जाता है।

"इसने मेरी स्त्री बाँध ली है" इस कारण इस से वैर मत करो। मैं अपने पूर्वजन्म के किये कर्मों के अनुसार ही बँधी हूँ।

दरिद्र, रोग, दुःख बन्धन और व्यसन, ये आत्मा के अपराध रूपी वृक्ष के फल, देह-धारियों को हुआ ही करते हैं।

इस कारण तू मेरे बन्धन में पड़े होने से पैदा हुए वैर को छोड़ कर धर्म में मन लगा कर और विधि-पूर्वक इसका सत्कार कर।

कबूतरी के धर्म और युक्ति के वचन सुन कर कबूतर चिड़ीमार के पास जाकर नम्रता से बोला—हे भद्र ! तुम्हारा आना कल्याणकारी हो। कहो, मैं तुम्हारा क्या प्रिय करूँ ? तुम दुःख न मानना। इसे तुम अपना घर ही समझना।

कबूतर के इस प्रकार वचन सुन कर चिड़ीमार बोला, हे कबूतर ! मुझे जाड़ा बहुत लगता है। जाड़े से बचा।

तब वह कबूतर चोंच से अंगारे की लकड़ी ला कर और अग्नि गिरा कर सूखे पत्तों में उसे जलाने लगा। अग्नि जला कर चिड़ीमार से बोला, अब निर्भय हो कर तुम अपने शरीर को तपाओ, और खाने का सामान तो मेरे पास है नहीं जिससे तुम्हारी भूख दूर करूँ।

कोई सैकड़ों का, कोई सौ का, कोई दस का पालन करते हैं पर अपुण्यकारी मुझ शूद्र का शरीर तो एक की तृप्ति के लिए भी काफ़ी नहीं है।

जो एक अतिथि को भी अन्न देने का सामर्थ्य नहीं रखता उसका अनेक क्लेश वाले घर में रहने से क्या फल है।

सो इस दुःख से जीने वाले शरीर का इस प्रकार

ाधन करूँगा कि फिर माँगने वाले के पास न जा
कूँ।

इस तरह यह धर्म की बात समझने वाला कबू-
र अपनी ही बुराई करके, चिड़ीमार से बोला, तू
ाड़ी देर ठहर।

इस तरह कह कर वह धर्मात्मा कबूतर प्रसन्न
मन से उस आग की परिक्रमा कर अपने घर की
तरह उसमें घुस गया।

तब चिड़ीमार उसको देख कर कृपा से अत्यन्त
दुःखी हो आग में गिरते कबूतर से बोला—

जो पाप करता है उसको ज़रूर आत्मा प्यारा नहीं
होता। आत्मा के लिये पाप को आत्मा ही भोगता है।

अतः मैं पापी सदा पाप के कामों में लगा रहता
हूँ, बड़े घोर नरक में पड़ूँगा, इसमें कुछ संदेह नहीं।

ज़रूर अपना मांस देते हुए इस महात्मा कबूतर
ने मुझ निर्दयी को शिक्षा दी है।

आज से सब भोगों को छोड़ कर इस देह को
गर्मी में थोड़े जल के समान सुखा डालूँगा, सर्दी गर्मी
का सहने वाला, दुबला और मलिन मैं अनेक उप-
वास कर धर्म करूँगा। तब चिड़ीमार ने उसी समय
उस पिंजरे को तोड़ कर कबूतरी को छोड़ दिया।

चिड़ीमार से छोड़ी हुई वह कबूतरी अग्नि में अपने पति को गिरा देख शोक करने लगी।

हे नाथ! तुम्हारे बिना मुझे जीने से अब क्या काम है। दीन, पतिहीन स्त्री के जीने से क्या फल है।

इस तरह बहुत विलाप कर दीन दुःखी हो कर पतिव्रता उस जलती हुई आग में कूद पड़ी।

तब अच्छे गहने कपड़ों से भूषित हो कर वह कपोती विमान में अपने स्वामी को देखने लगी। और वह भी दिव्य शरीर हो ठीक कहने लगा कि हे शुभे! तू मेरे पीछे आई। यह अच्छा किया।

वह कबूतर सूर्य के छिपने पर रोज़ सुख का अनुभव किया करता था और वह कबूतरी भी पूर्व जन्म के पुण्यों के प्रभाव से कबूतर की देह के समान बन गई।

तब प्रसन्न हो चिड़ीमार सघन वन में घुस गया और जानवरों का मारना छोड़ दिया। वहाँ दावाग्नि को जलता देख कर उसमें प्रवेश कर गया और पाप-रहित हो स्वर्ग का सुख भोगने लगा।

इस कारण मैं कहता हूँ कि कबूतर ने शरण में आये शत्रु की यथायोग्य पूजा करके अपने मांस का न्यौता दिया था।

चिड़ीमार से छोड़ी हुई वह कबूतरी अग्नि में अपने पति को गिरा देख शोक करने लगी।

हे नाथ! तुम्हारे विना मुझे जीने से अब क्या काम है। दीन, पतिहीन स्त्री के जीने से क्या फल है।

इस तरह बहुत विलाप कर दीन दुःखी हो वह पतिव्रता उस जलती हुई आग में कूद पड़ी।

तब अच्छे गहने कपड़ों से भूषित हो कर वह कपोती विमान में अपने स्वामी को देखने लगी। और वह भी दिव्य शरीर हो ठीक कहने लगा कि हे शुभे! तू मेरे पीछे आई। यह अच्छा किया।

वह कबूतर सूर्य के छिपने पर रोज़ सुख का अनुभव किया करता था और वह कबूतरी भी पूर्व जन्म के पुण्यों के प्रभाव से कबूतर की देह के समान बन गई।

तब प्रसन्न हो चिड़ीमार सघन वन में घुस गया और जानवरों का मारना छोड़ दिया। वहाँ दावाग्नि को जलता देख कर उसमें प्रवेश कर गया और पाप-रहित हो स्वर्ग का सुख भोगने लगा।

इस कारण मैं कहता हूँ कि कबूतर ने शरण में आये शत्रु की यथायोग्य पूजा करके अपने मांस का न्यौता दिया था।

यह सुन अरिमर्दन ने दीप्ताक्ष से पूछा, आपकी क्या राय है ? वह बोला, देव ! इसको मत मारो। इसका उन लोगों ने तिरस्कार किया है। यह हमारी भलाई ही करेगा और उनके छिद्र देखेगा।

इसके बाद अरिमर्दन ने वक्रनास मन्त्री से पूछा कि आपकी इस विषय में क्या राय है ? वक्रनास ने जवाब दिया कि यह मारने योग्य नहीं है, क्योंकि आपस में झगड़ा करते हुए शत्रु भी भलाई ही करने वाले होते हैं।

इसके बाद अरिमर्दन ने प्राकारकर्ण से पूछा कि तुम अपनी राय बतलाओ ? उसने कहा, देव ! इस को नहीं मारना चाहिए। इसकी रक्षा करने से शायद सुख से समय बीतेगा।

यह सुन कर खुद अरिमर्दन भी इसी बात को ठीक बतलाने लगा। जब, शरण में आये हुए की रक्षा की जावेगी, यह देखा तब झिझकता हुआ मुसकरा कर रक्ताक्ष फिर बोला, दुःख है कि तुमने स्वामी का नाश किया। कहा है—

जहाँ अपूज्य पूजे जाते हैं और पूज्यों का निरादर होता है वहाँ दुर्भिक्ष (अकाल) मौत और भ्रम हुआ करते हैं।

आश्रित कृपण होने पर भी मूर्ख विनय से शान्त होता है। अब सब नगर मूल उखाड़ने से ही हमारा नाश हुआ। यह अच्छा कहा है कि जो हित को त्याग कर विपरीत का सेवन करते हैं, चतुर पुरुष वास्तव में उनको बनावटी रूप रखने वाला शत्रु समझा करते हैं।

देश काल के विरुद्ध आचरण करने वाले मंत्रियों को पाकर अपने पास की भी चीज़ें ऐसे जाती रहती हैं जैसे सूर्य के निकलने से अंधेरा।

तब रक्ताक्ष के इन वचनों का अनादर करके सभी स्थिरजीवी को उठा कर अपने क़िले में ले जाने लगे। तब स्थिरजीवी बोला, देव ! मैं असमर्थ हूँ। अब मेरे ग्रहण करने से क्या है ? इससे मैं अब जलती हुई आग में गिरना चाहता हूँ। मुझे आप कृपा कर आग दीजिए। तब रक्ताक्ष उसके असली मतलब को जान कर बोला, आग में क्यों गिरना चाहता है ? वह बोला, मेरी तो तुम्हारे लिए मेघवर्ण ने यह आपत्ति की है। सो मैं उससे वैर निकालने के लिए उल्लू बनने की इच्छा करता हूँ। यह सुन राजनीति में चतुर रक्ताक्ष बोला, भद्र ! तुम कुटिल और बनावटी बात करने

में चतुर हो, जो तुम उल्लू-योनि में पैदा होकर भी अपनी कौवे की योनि को बड़ा मानते हो।

तब रक्ताक्ष के कहने को न मान कर ये अपने वंश के नाश के लिए ही उस कौवा मन्त्री को अपने क़िले में ले गये। वहाँ पर हँस कर चिरंजीवी अपने मन में विचारने लगा कि "मालिक की भलाई चाहने वाला जिसने कहा था कि इसे मार डालो, वही एक इन सब मंत्रियों में नीतिशास्त्र के तत्त्व का जानने वाला है। अगर ये सब उसका कहना मानते तो थोड़ा भी नुक़सान न होता।" तब क़िले के दरवाज़े पर पहुँच अरिमर्दन बोला, हे हितकारी! इस चिरंजीवी को जहाँ यह चाहे वहाँ रहने को जगह दो। यह सुन चिरंजीवी विचारने लगा, मुझ को तो इनके मारने का उपाय करना है। बीच में रहने से काम न बनेगा। शायद मेरी शकल देख कर होशियार हो जावेंगे इसलिए क़िले के दरवाज़े पर रह कर अपना काम बनाऊँ। ऐसा विचार कर उल्लू-राज से बोला, देव! यह ठीक है जो आपने कहा। परन्तु मैं भी नीतिशास्त्र का जानने वाला तुम्हारा दुश्मन हूँ। यद्यपि तुम्हारे साथ प्रीति करने वाला और पवित्र हूँ तो भी क़िले के भी— —

रहना ठीक नहीं। किले के दरवाज़े पर ही रह कर, मैं आपके आज्ञानुसार भी यत्न से पवित्र द्वार पाल हो सेवा करूँगा। 'बहुत अच्छा' ऐसा कह देने पर उल्लूराज के नौकर उसके हुक्म से चिरञ्जीवी को ख़ूब भोजन दिया करते थे।

कुछ दिन में यह कौआ मोर के समान बलवान् हो गया। तब रक्ताक्ष चिरञ्जीवी को मज़बूत देख कर आश्चर्य से मन्त्रियों और राजा से बोला, हे मन्त्रियो! मैं समझता हूँ, तुम सब मूर्ख हो।

वे सब फिर भी, दैव के प्रतिकूल होने से रक्ताक्ष का कहना न मान कर उसकी सेवा करते ही रहे। तब रक्ताक्ष अपने पक्ष के उल्लूओं को बुला कर एकान्त में बोला, अहो! यहीं तक हमारे राजा की कुशल और दुर्ग की स्थिति है। मैंने वह उपदेश दिया, जो कुल-क्रमागत मन्त्री उपदेश दिया करता है। अब हम दूसरे पर्वत के क़िले पर जाकर रहेंगे, यहाँ रहना ठीक नहीं है। कहा है कि—

आने वाली आपत्ति का जो उपाय कर लेता है वह शोभा पाता है और आने वाली विपत्ति का जो उपाय नहीं करता वह [illegible] करता है।

ऐसा विचार कर तुमको मेरे साथ चलना चाहिए। ऐसा कह कर रक्ताक्ष अपने साथियों के साथ यहाँ से दूसरी जगह को चल पड़ा।

रक्ताक्ष के चले जाने पर चिरजीवी प्रसन्न हो विचारने लगा, अहा ! बहुत अच्छा हुआ जो रक्ताक्ष चला गया। यह दूरंदेश था और ये सब तो मूर्ख हैं, मैं इन सबों को आसानी से मार डालूँगा।

जिस राजा के पास दूरंदेश मन्त्री नहीं होते और वंशक्रमागत नहीं होते उसका शीघ्र ही नाश हो जाता है। यह ठीक कहा है—

जो अच्छी नीति को छोड़ कर प्रतिकूल का सेवन करते हैं बुद्धिमानों ने उन मन्त्रियों को शत्रु रूप बतलाया है।

ऐसा विचार कर अपने घोंसले में गुफा जलाने के लिए रोज़ एक वन की लकड़ी इकट्ठा करने लगा। उसको उन उलूक मूर्खों ने न जाना कि यह हमारे जलाने को घोंसला बढ़ाता है। यह ठीक कहा है—

जो दुश्मन को दोस्त बनाता है, दोस्त से दुश्मनी करता है और उसे मारता है, भलाई को बुराई जानता है, पाप को भला मानता है, उस पुरुष को भाग्य से नष्ट हुआ समझो।

घोंसला बढ़ाने के छल से क़िले के दर्वाज़े पर बहुत सी लकड़ी इकट्ठा हो जाने पर, सूर्य्य के उदय होते उलूकों के अंधे होने पर स्थिरजीवी जल्दी से जाकर मेघवर्ण से बोला, हे स्वामी ! गुफा जलाने से जीतने के योग्य बना दी है। अब परिवार के साथ मिल कर वन की जलती हुई एक एक लकड़ी लेकर गुफ़ा के दर्वाज़े पर मेरे घोंसले में डाल दो जिससे वे सब शत्रु कुम्भीपाक नरक के समान दुख से मर जावेंगे। यह सुन, प्रसन्न हो, मेघवर्ण बोला। तात ! अपना हाल तो कहो ? आज तुमको बहुत दिन में देखा। वह बोला, प्यारे ! यह हाल कहने का समय नहीं है, शायद उस शत्रु से कोई मेरा यहाँ का आना बतला दे तो वह अन्धा कहीं चला जावेगा। अब जल्दी करो। कहा है कि—

शीघ्र करने योग्य कार्य में जो मनुष्य देरी करता है, देवता उसके कार्य को नष्ट कर देते हैं।

गुफ़ा से लौटने पर, शत्रु को मारने वाले आप से शत्रु का हाल विस्तार-पूर्वक कहूँगा। उसका कहना सुन, परिवार के साथ वन की जलती हुई एक एक लकड़ी चोंच से पकड़ कर उस गुफ़ा के दर्वाज़े पर पहुँच कर स्थिरजीवी के घोंसले में डाल दीं। तब

ने सब दिन के अन्धे रक्ताक्ष के वचनों को याद करते हुए, द्वार रुकने से न निकल सके, और गुफा के अन्दर ही कुम्भीपाक की तरह जल कर मर गये।

इस तरह सब शत्रुओं को मार कर फिर मेघवर्ण घमंड चूर की गुफा में पहुँचा। तब सिंहासन पर बैठ कर सभा में प्रसन्न मन हुआ चिरजीवी से पूछने लगा। तात! तुमने इतना समय शत्रुओं के बीच में रह कर कैसे बिताया? यह हमको तमाशा मालूम होता है, तुम बतलाओ। चिरजीवी ने कहा, भद्र! आगे के फल की आशा से सेवक कष्ट को कुछ नहीं समझा करता।

मेघवर्ण ने कहा, तात! यह तो मैं तलवार की धार के समान व्रत समझता हूँ 'जो शत्रु के साथ रहता है'। वह बोला, देव! इसी प्रकार है। परन्तु मैंने ऐसी मूर्ख मण्डली कहीं नहीं देखी और न महा पण्डित, अनेक शास्त्रों में अलौकिक बुद्धिमान् रक्ताक्ष के सिवा कोई विद्वान् देखा। उसने ज्यों की त्यों मेरे चित्त की दशा जान ली। बाकी जो उसके मन्त्री थे वे बड़े बेवकूफ़ थे। उन्होंने कुछ भी न जान पाया। मुझे इस व्रत के करने में बड़ी बड़ी दिक्कतें उठानी पड़ी हैं, तब काम हुआ है। मेघवर्ण ने

कहा ! यह सच है, जो महात्मा होते हैं वे महा बली आपत्ति के आने पर भी प्रारब्ध को नहीं छोड़ते। कहा है—

नीति का भूषण धारण करने वाले महात्माओं का यही महत्त्व है कि अत्यन्त दुःख देने वाली विपत्ति में भी आरम्भ किये काम को नहीं छोड़ते। और नीच पुरुष विघ्नों के भय से पहले तो काम को शुरू ही नहीं करते। बीच के मनुष्य काम को शुरू तो कर देते हैं पर थोड़ा विघ्न होते ही काम को छोड़ कर बैठ रहते हैं। उत्तम मनुष्य सैकड़ों विघ्न होने पर भी आरम्भ किये हुए काम को बिना पूरा किये कभी नहीं छोड़ते।

आपने मेरा राज्य शत्रुओं को मार कर निष्कण्टक कर दिया। वह बोला, देव ! आप भाग्यवान् हैं जिनके सब काम पूरे होते हैं। बहादुरी से सब काम पूरे होते हैं, यह नहीं किन्तु बुद्धि से जो काम किये जाते हैं वे जीत के लिए होते हैं। मेघवर्ण ने कहा— ज़रूर ही नीति के शास्त्र शीघ्र फल देने वाले हैं। जिनकी सहायता से तुमने उनके भीतर घुस कर अरिमर्दन का परिवार सहित सर्वनाश कर दिया। स्थिरजीवी ने कहा, शत्रु को पहले समझाना

पीछे उसमें प्रवेश करना चाहिए। आज शत्रु के छीनने वाले मेरे प्रभु को पहले की तरह नींद आवेगी। अब आप निष्कण्टक प्रजा पालन में सावधान होकर बहुत काल तक लक्ष्मी का भोग करो। कहा है—

जो राजा रक्षा आदि के गुणों से प्रजा को प्रसन्न नहीं करता है, बकरी के गले के थनों की नाईं उसका राज्य फ़िज़ूल है।

गुणों में प्रीति, व्यसनों में अनादर, अच्छे नौकरों से प्रीति जिस राजा की होती है वह बहुत काल तक राज्यलक्ष्मी का भोग करता है।

यदि तुम समझो कि अब तो राज्य मिल गया है, ऐसा मान कर लक्ष्मी का घमण्ड मत करना क्योंकि राजाओं का ऐश्वर्य चलायमान होता है। बांस पर चढ़ने के समान राज्यलक्ष्मी का पाना कठिन है। थोड़ी देर में नाश होने वाली है।

जहाँ राजतिलक हुआ फ़ौरन राजों की बुद्धि व्यसनों में लग जाती है। राजों के तिलक के समय में घड़े जल के साथ ही आपत्ति को निकालते हैं। आपत्ति [illegible] भी मुश्किल नहीं है। कहा है कि—

रामचन्द्र का वन को जाना, वलि का बन्धन, पांडवों का वनवास, यदुवंशियों का निधन होना, राजा नल का राज्य से अलग होना, अर्जुन का विराट् भवन में नाट्याचार्य होना, त्रिभुवन-विजयी रावण का नाश, इत्यादि घटनाओं को विचार कर यह मनुष्य काल के वश में हो कर सब कुछ सहता है। कौन किस की रक्षा करता है ? अर्थात् कोई नहीं।

जो इन्द्र के सुहृद् बन कर स्वर्ग में गये वे दशरथ राजा कहाँ है ? समुद्र की वेला के नियन्ता राजा सगर कहाँ है ? पृथु राजा कहाँ है ? सूर्य का पुत्र मनु कहाँ है ? काल ने ये सब वली पैदा कर नष्ट कर दिये।

तीनों लोकों का विजय करने वाला मांधाता कहाँ गया ? सत्यव्रत राजा कहाँ गया ? देवताओं का राजा नहुष कहाँ गया ? सत् शास्त्रवान् केशव कहाँ हैं ? इन महात्माओं को काल ने ही विध्वंस कर दिया !!

इस तरह मतवाले हाथी के कान की नाईं चंचल राज्य-लक्ष्मी को पाकर न्यायानुसार भोग करना चाहिए।

लब्ध-प्रणाश

चौथा तन्त्र

अब 'लब्ध-प्रणाश' (प्राप्त हो कर नष्ट हो जाना) नाम का चौथा तन्त्र शुरू किया जाता है जिसके शुरू में कहा गया है कि—

कार्य्य के उत्पन्न होने में जिसकी बुद्धि नष्ट नहीं हो जाती वह कठिन कार्य्य को इस तरह पार कर जाता है जैसे जल में ठहरा हुआ बन्दर। वह इस प्रकार सुना जाता है कि—

१—बन्दर और मगर की कहानी।

किसी समुद्र के किनारे एक जामुन का वृक्ष था। उस पर सदा जामुन रहा करती थीं। उस पर रक्तमुख नाम का एक बन्दर रहता था। एक बार उस वृक्ष के नीचे करालमुख नाम वाला मगर

समुद्र के जल से निकल कर कोमल रेत में आ बैठा। उसको देख रक्तमुख ने कहा, आप हमारे अतिथि हैं। आप हमारे दिये हुए अमृत के समान जामुन के फल खाइए। क्योंकि—

दूर से थक कर आये हुए अतिथि का जो पूजन करता है वह परम गति को पाता है।

ऐसा कह कर उसको जामुन-फल दिये। वह उनको खा कर, उसके साथ बहुत समय तक बात चीत कर के सुखपूर्वक घर को गया। इस तरह नित्य ही बन्दर और मगर जामुन की छाया में बैठ कर बात चीत करते हुए समय बिताते थे। मगर खाने से बची जामुनों को रोज़ ले जा कर अपनी स्त्री को दिया करता था। एक बार उसने पूँछा, नाथ! यह अमृत के समान फल आप कहाँ से लाते हैं? वह बोला, मेरा एक मित्र रक्तमुख नाम का बन्दर प्रीति से इन फलों को देता है। तब उसने कहा, जो सदा ऐसे अमृत के समान फल खाता है वह भी अमृत के समान ही होगा सो, यदि आप मुझको अपनी स्त्री समझते हैं तो उसका हृदय ला कर मुझे दो, जिससे उसको खा कर जरा-मरण से रहित हो जाऊँ।

प्यारी ! ऐसा मत कहो। वह बुद्धिमान् हमारा भाई फल देनेवाला है, तुम इस फ़िज़ूल हठ को छोड़ दो। कहा है—

माता एक सहोदर भाई उत्पन्न करती है, वाणी दूसरा उत्पन्न करती है। वाणी से उत्पन्न हुआ सहोदर से भी अधिक होता है ऐसा पंडितों ने कहा है।

तब मगर की स्त्री ने कहा, यदि आप उसका हृदय लाकर मुझको न देंगे तो मैं जीवित न रहूँगी। मगर उसका दृढ़ संकल्प जान चिन्ता से व्याकुल-हृदय हो बोला, क्या करूँ, किस प्रकार उसको मारूँ ? इस तरह विचारता हुआ बन्दर के पास आया। बन्दर उसको देखतेही जल्दी से बोला, मित्र ! आज देर में क्यों आये ? अच्छी तरह क्यों नहीं बोलते ? वह बोला, मित्र ! मुझको तेरी भाभी ने आज धमकाया है कि "हे कृतघ्न ! तू अपना मुँह मुझे न दिखला। प्रतिदिन तेरा मित्र पालन करता है परन्तु तू घर दिखलाने मात्र से भी उसका प्रत्युपकार नहीं करता। तेरा प्रायश्चित्त भी नहीं हो सकता। कहा है—

ब्रह्महत्यारा, शराबी, चोर, व्रतभङ्ग करने

वाला, इनका अच्छे मनुष्यों ने छुटकारा बतलाया है परन्तु कृतघ्न का छुटकारा नहीं है।

तुम मेरे देवर का प्रत्युपकार करने के लिए घर लिवा लाओ। नहीं तो तेरे साथ मेरा परलोक दर्शन होगा"। इस तरह उसने मुझसे कहा है और मैं आप के पास आया हूँ। इसीसे इतनी देर लगी थी। अब मेरे साथ घर को चलो। बन्दर ने कहा, मित्र! तुम्हारी स्त्री ने ठीक कहा है। परन्तु हम वनचारी हैं और तुम जलजीव हो। मैं वहाँ किस प्रकार जा सकता हूँ। तुम मेरी भाभी को यहीं ले आओ, मैं उसको प्रणाम कर आशीर्वाद ग्रहण करूँ। वह बोला, मित्र! समुद्र के भीतर किनारे पर, मनोहर स्थान में हमारा घर है। आप मेरी पीठ पर चढ़ कर सुख से वहाँ चलें। वह सुन कर आनन्द से बोला, मित्र! यदि ऐसा है तो देर करने का काम नहीं, जल्दी करो। मैं तुम्हारी पीठ पर चढ़ता हूँ। तब जल में जाते मगर को देख कर डर कर बन्दर बोला, भाई! धीरे धीरे चलो। जल की लहरों से मेरा शरीर ढका जाता है। यह सुन कर मगर सोचने लगा, अब तो यह अथाह जल में आ कर मेरे क़ाबू में हुआ, अब तिलमात्र खुद

नहीं चल सकता। अब इससे अपना मतलब कहूँ, जिससे अपने देवता के मनावे। और उससे बोला, मित्र! मैं तुमको स्त्री के कहने से विश्वास देकर मारने के लिए लाया हूँ। यह बोला, मित्र! मैंने तुम्हारा या उसका क्या नुक़सान किया है जो तुम्हारा विचार ऐसा हुआ। मगर ने कहा, मित्र! अमृत के फल के रस के खाने से उसने तुम्हारे हृदय के खाने का विचार किया है। यह सुन दूरन्देश बन्दर फ़ौरन बोला, भद्र! अगर ऐसा ही था तो तुमने वहाँ मुझसे क्यों न कहा, मैंने अपना हृदय जामुन की खोखल में बहुत दिन से छिपा रक्खा है। वह तुम्हारी स्त्री की ही भेंट करता। मेरा हृदय यहाँ नहीं है, तुम मुझे क्यों लाये? यह सुन मगर ख़ुशी से बोला, मित्र! यदि ऐसा है तो अपना हृदय मुझको ला दो जिसे मैं अपनी दुष्टा स्त्री को दे दूँ। मैं तुमको वहाँ लिये चलता हूँ। ऐसा कह, लौट कर जामुन वृक्ष के पास गया। बन्दर भी देवताओं को याद कर जैसे तैसे किनारे पर आया और कुलांच मार कर जामुन के पेड़ पर चढ़ कर विचारने लगा। अहो! अब तो प्राण बचे। ठीक कहा है—

अविश्वासी का विश्वास न करे और विश्वासी का भी विश्वास न करे। विश्वास से पैदा हुआ भय जड़ से नष्ट कर देता है। आज मेरे नये जन्म का दिन है। ऐसा विचारते हुए बन्दर से मगर ने कहा, मित्र ! उस हृदय को दो जिसको तुम्हारी भाभी ग्रहण कर अनशन व्रत से उठे। तब हँस कर और घुड़कता हुआ बन्दर उससे बोला, मूर्ख ! विश्वास-घातक ! क्या किसी के दो हृदय होते हैं ? तुझे धिक्कार है ! जा, इस वृक्ष के नीचे फिर कभी मत आना।

एक बार दुष्ट हुए मित्र से जो फिर मिलने की इच्छा करता है वह मानो मौत को ही बुलाता है।

यह सुन कर मगर शर्मिन्दा हो, सोचने लगा, अहो ! मुझ मूर्ख ने अपने मन का भाव क्यों इससे कह दिया। अब यदि फिर किसी तरह यह विश्वास करे तो अच्छा हो। और उससे बोला, मित्र ! हँसी में मैंने तुम्हारा अभिप्राय जाना था। स्त्री को तुम्हारे हृदय से कुछ प्रयोजन नहीं है। अब अतिथि बन कर हमारे घर पर चलो। बन्दर ने कहा, अरे दुष्ट जा, अब नहीं जाऊँगा। कहा है—

भूखा कौन सा पाप नहीं ... , क्षीण मनुष्यों

को दया नहीं रहती। भद्रे ! प्रियदर्शन से कहना गंगदत्त फिर कुए में नहीं आता।

मगर ने कहा, यह किस प्रकार ? बन्दर बोला—

२—मेंडक और साँप की कहानी।

किसी कुए में गंगदत्त नाम का मेंडकों का राजा रहता था। वह एक बार हिस्सेदारों से सताया हुआ कुए की ढेकली को पकड़ कर निकला और उसने विचारा कि इन गोतियों का अपकार किस प्रकार करूँ। कहा है—

जिसने आपत्ति में नुक़सान किया हो, बुरी दशा में जो हँसा हो, ऐसे दोनों का नुक़सान करके ही फिर उत्पन्न हुआ अपने को समझना चाहिए।

उसने ऐसा विचार कर बिल में घुसता हुआ एक काला सांप देखा। उसको देख कर विचार किया कि इसको उस कुए में ले जाकर उन हिस्सेदारों का नाश करा दूँ। क्योंकि—

शत्रुओं के साथ शत्रुओं को भिड़ावे, बलवान् के साथ बलवान् को, अपने काम के लिए लगावे। कारण यह कि उस शत्रु के नाश में कुछ दुख नहीं होता।

और बुद्धिमान् तेज़ शत्रु को तेज़ शत्रु से नष्ट करावे, पीड़ा करने वाला काँटा सुख के लिए दूसरे काँटे से ही निकाला जाता है।

ऐसा विचार कर बिल के दर्वाज़े पर जा कर उसको बुलाने लगा। आओ प्रियदर्शन! आओ! उसकी आवाज़ सुन सांप ने सोचा, जो मुझको बुलाता है यह अपनी जाति का नहीं है, यह सांप की आवाज़ नहीं है। दूसरे किसी के साथ संसार में मेरी मित्रता नहीं है। इस कारण यहीं से मालूम करूँ कि यह कौन है। कहा है।

जिसका कुल स्वभाव और रहने की जगह न मालूम हो उसका साथ न करे। यह बृहस्पति ने कहा है—

कभी कोई सँपेरा मुझको बुला कर पिटारी में रखना चाहता हो या कोई पुरुष वैर के कारण किसी को काटने के लिए मुझ को बुलाता हो। और उससे बोला, आप कौन हैं? वह बोला। भाई! मैं गंगदत्त मेंढकों का राजा हूँ, तुम्हारे पास मित्रता करने को आया हूँ। यह सुन कर सांप बोला, अरे! यह बात मानने के लायक़ नहीं है कि तिनकों का और आग का मेल हो। कहा है—

जो जिससे मारने के योग्य होता है वह उसके पास स्वप्न में भी कभी नहीं आता। तू इस तरह क्यों फ़िजूल बरबराता है।

गंगदत्त बोला, भाई! यह ठीक है कि तुम हमारे स्वाभाविक बैरी हो, परन्तु शत्रुओं से तिरस्कार पा कर मैं तुम्हारे पास आया हूँ। कहा है—

सर्वनाश और प्राणों का संशय होने पर शत्रु को प्रणाम कर अपनी और धन की रक्षा करे।

साँप ने कहा, तुम्हारा किसने तिरस्कार किया है? वह बोला गोतियों ने। उसने कहा तुम्हारा घर कहाँ है? वह बोला, पत्थरों से बने हुए कुए में। साँप ने कहा, भाई! मेरे पैर नहीं हैं इससे मैं उसमें घुस नहीं सकता। और घुस जाने पर ऐसी कोई जगह भी नहीं है जहाँ बैठ कर तुम्हारे शत्रुओं को मारूँ, इससे तुम चले जाओ। कहा है—

जो चीज़ खाई जा सकती है, और खा कर पच जावे और पचने पर गुणकारी हो, भलाई चाहने वाले को ऐसी ही चीज़ खानी चाहिए।

गंगदत्त ने कहा, आप चलिए, मैं सुखपूर्वक तुमको वहाँ पहुँचा दूँगा। उसके बीच में जल के पास मनोहर खोखल है। उसमें बैठ कर ख़ुशी से

तू दुश्मनों को खा डालना। यह सुन कर सांप सोचने लगा, मैं बुड्ढा हो गया। कभी कभी एक चूहा मिलता है। इस कुलाङ्गार ने जीने का उपाय तो अच्छा बतलाया। वहाँ जाकर मेंड़कों को मारना चाहिए।

ऐसा विचार कर उससे बोला, अरे! गंगदत्त! ऐसा ही है तो आगे हो, जिससे वहाँ चलें। गंगदत्त ने कहा, प्रियदर्शन! मैं तुमको सुखपूर्वक वहाँ पहुँचाऊँगा और स्थान भी दिखला दूँगा परन्तु हमारे परिवार की तुम रक्षा करना; सिर्फ़ जिनको मैं बतलाऊँ उन्हीं को खाना। सांप ने कहा, तू हमारा मित्र बन गया है, डरे मत। तू जिनको बतलायेगा उन्हीं को खाऊँगा। इस तरह कह कर सांप बिल से निकला और उससे मिल कर उसके साथ चला। कुएँ पर पहुँच कर ढेकली के रास्ते से सांप को वह अपनी जगह पर ले गया। और वहाँ जाकर उसने अपने शत्रुओं को दिखला दिया। उनको वह सांप धीरे धीरे खा गया। जब कोई मेंड़क न रहा तब सांप ने कहा, भद्र! तुम्हारा शत्रु अब कोई बाक़ी नहीं रहा, अब और कुछ भोजन मुझे बताओ, क्योंकि तुम मुझको यहाँ

लाये हो। गंगदत्त ने कहा, मित्र! तुमने मित्र का काम किया है। अब तुम इसी ढेंकली के रास्ते से चले जाओ। साँप ने कहा, अरे! गंगदत्त! यह तू ने क्या कहा! मैं वहाँ कैसे जाऊँ? मेरा बिल तो दूसरे किसी ने घेर लिया होगा। इससे यहीं रहते हुए तुम रोज़ अपने परिवार का एक मेंड़क दो, नहीं तो सबको खा लूँगा। यह सुन, घबरा कर गंगदत्त विचारने और सोचने लगा, अहो! साँप को लाकर यह मैंने क्या किया। अब मैं मना करूँ तो यह सब को खा जावेगा। क्योंकि कहा है—

जो अपने पराक्रम से अधिक दुश्मन को मित्र बनाता है, इसमें शक नहीं कि वह मानो ख़ुद ज़हर खाता है।

इसलिए मैं इसे रोज़ एक एक मेंड़क दूँ। क्योंकि—

सर्वनाश होने के समय पंडित जन आधा छोड़ देते हैं और आधे से अपना काम चलाते हैं; क्योंकि सर्वनाश सहना बड़ा मुश्किल है।

बुद्धिमान् थोड़े के लिए बहुत का नाश न करे। यही चतुराई है कि थोड़ा देकर बहुत बचावे।

ऐसा विचार कर रोज़ एक एक मेंड़क देने

लगा। वह उसको खाकर उसके पीछे दूसरे मेंड़कों को भी खा लेता था। एक दिन वह दूसरे मेंड़कों को खा कर गंगदत्त के पुत्र यमुनादत्त को भी खा गया। पुत्र के खाये जाने पर गंगदत्त ज़ोर से चिल्लाने लगा और किसी तरह चुप न हुआ। तब उसकी स्त्री ने कहा—

अरे दुष्ट! रोता क्यों है? अरे अपने पक्षवालों का नाश करनेवाले! अब कौन हमारी रक्षा करेगा?

अब भी अपने निकलने का और इसके मारने का उपाय सोचो। कुछ समय के बाद वह साँप सभी मेंड़कों को खा गया। केवल एक गंगदत्त बच गया। तब प्रियदर्शन ने कहा, अरे गंगदत्त! अब एक भी मेंड़क बाक़ी न रहा, मैं भूखा हूँ, मुझे कुछ खाने को दो, क्योंकि तुम मुझको यहाँ लाये हो। वह बोला मित्र! मेरे रहते हुए तुमको इस बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मुझे हुक्म दो ताकि दूसरे कुओं से विश्वास दिला कर और मेंड़कों को ला दूँ। वह बोला, भाई! तू तो मेरे भाई की जगह है, तुमको मैं नहीं खा सकता। अब यदि ऐसा करोगे तो पिता की जगह तुमको मानूँगा। तुम ऐसा ही करो।

गंगदत्त उसकी बात सुन कर देवताओं को

मनाता हुआ उस ढेंकली के रास्ते से निकल गया। प्रियदर्शन उसका इन्तिज़ार करता हुआ वहाँ बैठा रहा। बहुत दिन तक गंगदत्त के न आने पर साँप दूसरी खोखल में रहनेवाली गोह से बोला, भद्रे! हमारी थोड़ी सहायता करो। तुम बहुत दिन से गंगदत्त को जानती हो। तुम जाओ और ढूँढ़ कर उससे मेरा सँदेशा कहो कि तुम अकेले ही चले आओ, यदि दूसरे मेंड़क नहीं आते हैं। मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता। यदि मैं तुम्हारे साथ बुरा बर्ताव करूँ तो मेरा किया हुआ सब पुण्य नष्ट हो जावेगा। गोह उसका कहना सुन, जल्दी गंगदत्त को ढूँढ़ कर उससे बोली, भद्र गंगदत्त! वह तुम्हारा मित्र तुम्हारी बाट देख रहा है। जल्दी चलो। और तुमसे बुरा बर्ताव करने पर उसने अपना पुण्य बीच में रख दिया है। इससे निडर हो कर चलो। गंगदत्त बोला, भूखा कौनसा पाप नहीं करता, क्षीण मनुष्य दया-रहित हो जाते हैं। भद्रे! प्रियदर्शन से कहना कि गंगदत्त फिर कुएँ में नहीं आता। ऐसा कह उस ने उसको वहाँ से चलता किया।

सो हे दुष्ट जलचर! मैं भी तेरे घर गंगदत्त की तरह किसी प्रकार नहीं आऊँगा। यह सुन, मगर

बोला, हे मित्र ! यह तुम्हारा काम ठीक नहीं है। कृतघ्नता के दोष को मेरे घर चल कर जल्दी दूर करो। नहीं तो लंघन करके यहीं तुम्हारे सबब से प्राण छोड़ दूँगा। बन्दर बोला, मूर्ख ! तू ने मेरे साथ कपट किया परन्तु युधिष्ठिर कुम्हार की नाईं सच कह कर तू ने नष्ट कर दिया। यह सच कहा गया है कि जो मूर्ख, पाखंडी मनुष्य स्वार्थ को छोड़ कर सच कह देता है वह युधिष्ठिर कहार की तरह ज़रूर अपना काम बिगाड़ देता है। मगर ने कहा, यह किस तरह ? वह बोला—

३—युधिष्ठिर कुम्हार की कहानी।

किसी स्थान में एक कुम्हार रहता था। वह एक बार टूटे हुए घड़े की कोर पर दौड़ता हुआ गिर पड़ा। घड़े की कोर पर गिरने से उसके माथे में बड़ी चोट आई और .खून से सन गया। तब मुश्किल से उठ कर वह घर को गया। बदपरहेज़ी से उसकी चोट और भी बढ़ गई। कुछ काल में बड़ी मुश्किल से घाव अच्छा हुआ। एक बार देश में अकाल होने से वह कुम्हार भूख से घबरा कर किसी राजा के नौकर के साथ दूसरे देश में जा कर

राजा के पास नौकर हो गया। उसके माथे में चोट का बड़ा घाव देख कर राजा समझा कि यह तो बड़ा शूर वीर पुरुष है। इसी से तो इसने माथे के सामने चोट सही है। इस कारण राजा उसका दूसरे राजकर्मचारियों की अपेक्षा अधिक आदर-सत्कार किया करता था। दूसरे कर्मचारी उसके साथ राजा की अधिक प्रसन्नता देख कर बड़ी डाह करने लगे और राजा के डर से कह कुछ न सके। एक बार घोड़ा, हाथी और बहादुरों के तैयारी करते समय मौका जान कर, राजा ने उससे एकान्त में पूँछा। हे राजपुत्र ! तुम्हारा नाम और जाति क्या है, और किस लड़ाई में यह तुम्हारे चोट लगी है। उसने कहा, महाराज ! यह हथियार की चोट नहीं है। मैं युधिष्ठिर नाम का कुम्हार हूँ। मेरे घर में बहुत से टूटे हुए बरतन पड़े थे। एक बार चलता हुआ मैं टूटे बरतन पर गिर पड़ा, उसी की यह निशानी है। यह सुन कर राजा शर्मिन्दा होकर बोला, अरे ! राजपुत्र की नकल करने वाले इस कुम्हार ने मुझको ठग लिया, अभी इसकी गर्दन पकड़ कर बाहर निकाल दो। इस प्रकार कहने पर कुम्हार बोला, हे राजा ! ऐसा मत करो, लड़ाई में मेरी चतुरता देखो।

राजा ने कहा, तुम सब विद्याओं के जानने वाले हो तो भी चले जाओ। कहा गया है कि—

हे पुत्र! तू बहादुर, विद्या जानने वाला और दर्शनीय है परन्तु जिस कुल में तू पैदा हुआ है। उसमें हाथी नहीं मारे जाते। कुम्हार ने कहा, यह कैसे? राजा ने कहा—

४—एक गीदड़ की कहानी।

किसी स्थान में एक सिंह सिंहनी रहते थे। उस समय सिंहनी के दो बच्चे पैदा हुए। सिंह रोज़ जानवरों को मार कर सिंहनी को दिया करता था। एक दिन उसने कुछ नहीं पाया। घर आते समय रास्ते में गीदड़ का बच्चा मिला। सिंह ने उसको यह बालक है, यह समझ कर होशियारी से दाढ़ों में दबा कर जीता हुआ ही सिंहनी को दे दिया। तब सिंहनी बोली, स्वामिन्! तुम कुछ हमारे खाने को लाये? सिंह ने कहा, प्रिये! आज इस गीदड़ के बच्चे के सिवा मुझको कुछ नहीं मिला। इसको भी बालक समझ कर मैंने मारा नहीं है। इस वक्त तू इसको खाकर सब्र कर ले, सवेरे फिर देखा जावेगा। उसने कहा स्वामिन्! जब आपने इसको बालक

समझ कर नहीं मारा तो मैं कैसे इसको अपने पेट के लिए मारूँ। अब यह मेरा तीसरा पुत्र हुआ। इस प्रकार कह कर उसको भी स्तन के दूध से पालने लगी। इस तरह वे तीनों बच्चे अपनी विशेष जाति को न जानते हुए एक साथ अपने बचपन का समय बिताने लगे।

एक समय उस वन में कहीं से घूमता हुआ एक हाथी आया। उसको देख कर गुस्से से लाल मुँह कर ज्योंही सिंह के दोनों बच्चे उसकी ओर बढ़े त्योंही गीदड़ के बच्चे ने कहा, अरे! यह हाथी तुम्हारे कुल का शत्रु है, इसके सामने मत जाओ। इस प्रकार कह कर घर को दौड़ा। वे दोनों भी बड़े भाई के भाग जाने से निरुत्साही होकर घर को चले गये।

जब वे दोनों घर आये तब माता पिता के सामने हँस कर बड़े भाई के काम को बतलाने लगे कि यह हाथी को देख कर दूर ही से भाग आया। यह दोनों की बातें सुन कर गुस्से में भर कर, होंठ फड़फड़ाता हुआ, टेढ़ी भौं करके, उन दोनों को घुड़क कर धमकाया। तब सिंहनी ने एकान्त में ले जाकर उसे समझाया। पुत्र ऐसा कभी न करना, ये दोनों तेरे छोटे भाई हैं। तब गीदड़ अत्यन्त क्रोधित हो सिंहिनी से

बोला, क्या मैं इनसे बहादुरी, रूप, विद्या और चतुराई में कम हूँ। जो ये मेरी हँसी करते हैं। इससे मैं ज़रूर इन दोनों को मार डालूँगा।

यह सुन सिंहिनी उसका जीना चाहती हुई मन में हँस कर बोली–हे पुत्र! तू शूर, विद्यावान और रूपवान भी है परन्तु जिस कुल में तू पैदा हुआ है उस में कोई हाथी को नहीं मार सकता। हे बच्चे! अच्छी तरह सुन। तू गीदड़ी का बच्चा है। मैंने कृपा कर अपने स्तन के दूध से तेरा पालन किया है। सो जब तक ये दोनों बच्चे तुझको गीदड़ न जानें तब तक जल्दी भाग जा और अपनी जाति में मिल जा। नहीं तो ये दोनों तुझे मार डालेंगे। वह उसके वचन सुन, और डर कर वहाँ से चला गया और अपनी जाति में मिल गया।

इससे तू भी, जब तक ये राज पूत तुझे कुम्हार न जानने पावें तब तक जल्दी भाग जा, नहीं तो ये तेरा तिरस्कार कर मार डालेंगे। कुम्हार यह सुन कर जल्दी चला गया। इसी से यह कहा था कि जो छलिया अपना स्वार्थ छोड़ कर सच बोलता है वह युधिष्ठिर कुम्हार की नाईं ज़रूर अपना काम बिगाड़ता है।

हे मूर्ख ! तुझे धिक्कार है जो तू ने स्त्री के लिए इस काम को शुरू किया। दुष्ट ! तूने मेरे आते ही मेरे मारने का उपाय शुरू कर दिया। पर तेरे कहने से ही ज़ाहिर हो गया। देखो—

तोता और मैना अपने मुँह (वाणी) के दोष से ही बन्धन में पड़ते हैं और बगुले नहीं बँधते। चुप रहना ही सब कामों का साधक होता है।

और छिपा हुआ और रक्षित हुआ भी गधा अपना बड़ा शरीर दिखाता हुआ, और बाघ के चमड़े से ढका हुआ अपनी वाणी के दोष से मारा गया था।

मगर ने कहा किस प्रकार ? बन्दर बोला—

५—एक गधे की कहानी

एक जगह शुद्धपट नाम धोबी रहता था। उसके एक गधा था। वह घास के न मिलने से बड़ा कमज़ोर हो गया था। एक बार उस धोबी ने वन में घूमते हुए एक मरा हुआ बाघ देखा। उसने सोचा, अहो ! यह अच्छा हुआ। इस बाघ के चमड़े को ओढ़ा कर गधे को रात में जौ के खेत में छोड़ दिया करूँगा, इससे इसको बाघ समझ कर पास के रहने वाले खेत के रखवाले इसको खेत में से न निका-

रहेंगे। ऐसा करने पर गधा रोज़ जौ खाने लगा। सुबह को धोबो अपने घर ले आता था। एक दिन उसने एक गधे की आवाज़ सुनी, उसके सुनते ही खुद भी ज़ोर से चिल्लाने लगा। तब खेत के रखवाले ने उसको बाघ के चमड़े से ढका हुआ गधा जान कर लाठी और पत्थरों से मार डाला। इस तरह उसके साथ बात चीत करते हुए नाके से एक जलचर ने आकर कहा कि तुम्हारी स्त्री बिना खाये हुए, व्रत में बैठी हुई तुम्हारा इन्तज़ार कर रही थी। इन्तज़ार करती करती मर गई। इस तरह उसके वज्रपात के समान वचन सुन कर अत्यन्त व्याकुल हो वह विलाप करने लगा, हा! मन्दभागी के लिए यह क्या हुआ।

जिसके घर में माता नहीं और प्यारा बोलने वाली स्त्री नहीं उसको वन में चला जाना चाहिए क्योंकि उसके लिए वह घर वन के ही समान है।

हे मित्र! अब क्षमा करना, जो मैंने आपका अपराध किया है। मैं अब स्त्री के वियोग से अग्नि में प्रवेश करूँगा। यह सुन बन्दर हँसता हुआ बोला, अरे! मैंने तो पहले ही जाना था कि तू स्त्री के वश में है। उसने तुझे जीत लिया है। अब विल-

कुल विश्वास हो गया। मगर ने कहा, मित्र! है तो ऐसा ही, परन्तु अब मैं क्या करूँ? अब तो ये दो अनर्थ हुए। एक तो घर का नाश, दूसरे तुम्हारे समान मित्र से जुदाई।

इतने ही में दूसरे जलचर ने आकर कहा, अरे भाई! तुम्हारा घर भी दूसरे मगर ने अपने क़ाबू में कर लिया। यह सुन मगर दुःखी होकर उसको घर से निकालने का उपाय सोचने लगा और बोला—मेरे भाग्य का घात तो देखो—मित्र तो दुश्मन हुआ, स्त्री मेरी मर गई, घर दूसरे को मिला; अब क्या होगा। यह ठीक है—

घाव में बार बार चोट लगती है। अन्न के न मिलने पर भूख अधिक लगती है। आपत्ति के समय में वैरी जाग जाते हैं। विधाता के उलटा होने पर ये सब बातें हुआ करती हैं।

अब क्या करूँ, क्या उसके साथ लड़ूँ, या शान्ति से समझा कर द्वार से निकाल दूँ, या धन से सन्तुष्ट करूँ या इस बन्दर मित्र से पूछूँ।

ऐसा सोचता हुआ फिर भी उस जामुन के वृक्ष पर चढ़े हुए बन्दर से पूँछने लगा, मित्र! मेरा मन्द भाग्य तो देखो कि ...

मगर ने अपने क़ाबू में कर लिया। मैं आपसे पूँछने आया हूँ, बताओ क्या करूँ? उसने कहा, कृतघ्न पापी! मैंने बोलने को मने कर दिया था फिर भी मुझसे पूँछता है। तुझ मूर्ख से कुछ न कहूँगा। मगर ने कहा, मित्र! मुझ अपराधी के पहले स्नेह को याद करके हित का उपदेश दो। बन्दर ने कहा, मैं तुझसे न कहूँगा जो स्त्री के कहने से तुम मुझे समुद्र में डुबोने को ले गये थे। यह ठीक नहीं किया। यद्यपि स्त्री सबसे अधिक प्यारी होती है तथापि मित्र और भाई, स्त्री के कहने पर समुद्र में नहीं डाले जाते। हे मूर्ख! मूर्ख होने से तेरा नाश मैंने पहले ही कह दिया था। यह सुन कर मगर बोला, प्यारे! शास्त्र को जाननेवाले सात पैर साथ चलने को ही मित्रता कहते हैं। मित्र-भाव मान कर जो कुछ मैं कहता हूँ सो सुनो।

हित की इच्छा से उपदेश करनेवाले मनुष्यों को परलोक और इस लोक में दुःख नहीं होता।

इसलिए सब तरह से मुझ कृतघ्न पर उपदेशदान करके प्रसन्न हो जाओ। जो उपकारियों में साधु है उस के साधुपन (अच्छापन) में क्या गुण है? जो अपकारियों पर कृपा करे महात्माओं ने उसे ही साधु कहा है।

यह सुन कर बन्दर बोला, भाई ! यदि ऐसा है तो जाकर उसके साथ लड़ाई कर।

मरने से स्वर्ग को प्राप्त होगा, जीने से घर और बड़ाई पावेगा। लड़ाई करने से तुझको दोनों तरह लाभ होगा।

वह मगर उसका उपदेश ले कर मरने का निश्चय कर, बन्दर की आज्ञा ले कर अपने स्थान को चला गया। वहाँ अपने घर में उस शत्रु के साथ लड़ कर, बली होने से उसे मार कर अपना स्थान छीन कर बहुत दिन तक जीता रहा।

अपरीक्षित-कारक

पाँचवाँ तंत्र ।

यह अपरीक्षित-कारक (बे समझे करना) नाम पाँचवां तन्त्र शुरू किया जाता है जिसके शुरू में कहा गया है कि—

जो बुरा देखा गया हो, बुरा जाना गया हो, बुरी तरह सुना गया हो, बुरी तरह परीक्षित किया गया हो ऐसा काम मनुष्य को कभी न करना चाहिए जैसा कि नाई ने किया था। वह इस तरह सुना जाता है-

१—एक नाई की कहानी।

दक्षिण देश में एक पाटलिपुत्र नाम का शहर था। वहाँ मणिभद्र नाम का एक सेठ रहता था। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन करते हुए, भाग्य से उसका धन बरबाद हो गया। धन का नाश हो

जाने पर वह बड़ा दुखी हुआ। रात में चारपाई पर पड़ा हुआ विचारने लगा, अहो! इस दरिद्रता को धिक्कार है। कहा है—

शील, पवित्रता, सहन-शीलता, चतुराई, मधुरता, अच्छे कुल में जन्म, ये बातें धन नाश हो जाने वाले को कुछ भी अच्छी नहीं लगतीं। जब पुरुष ग़रीब हो जाता है तब मान, घमंड, विज्ञान, विलास और बुद्धि एक साथ सब नष्ट हो जाते हैं।

वसन्त ऋतु की हवा से मारी हुई शिशिर ऋतु की शोभा की नाईं बुद्धिमानों की बुद्धि निरन्तर परिवार के भरण-पोषण की चिन्ता में ही लग जाती है।

ऐश्वर्य कम हो जाने पर बड़े बुद्धिमान् की बुद्धि भी नष्ट हो जाती है। सदा खाने की चीज़ों को इकट्ठा करने की ही फ़िक्र रहती है।

बिना तारे का आकाश, सूखे हुए तालाब और भयानक श्मशान भूमि, इनके समान धनहीन का घर अच्छा होने पर भी बुरा ही मालूम होता है।

धन के बिना छोटे पुरुष सामने रहते हुए भी ज़ाहिर नहीं होते जैसे जल में पैदा हुए बुलबुले जल में ही नष्ट हो जाते हैं, मालूम नहीं होते।

लोग, अच्छे कुल में पैदा हुए, चतुर और सुजन निर्धनी मनुष्य को छोड़ कर, कुल, चतुरता और शील के बिना भी धनी पुरुष में कल्पवृक्ष की तरह नित्य भक्ति किया करते हैं।

संसार में पहले किये उपकार को कोई नहीं गिनता। विद्वान् और अच्छे पुरुष भी सम्पत्ति वाले की दासता स्वीकार करते हैं।

इस तरह विचार कर वह फिर सोचने लगा, कि मैं लंघन करके प्राणों को छोड़ दूँ। इस व्यर्थ जीवन से क्या लाभ है! ऐसा विचारता हुआ वह सो गया। उसको स्वप्न में पद्मनिधिरत्न बौद्ध संन्यासी के वेष में दर्शन देकर बोला, हे सेठ! तू वैराग्य मत कर। मैं पद्मनिधि तुम्हारे पूर्व पुरुषाओं का इकट्ठा किया हुआ हूँ। इसी रूप में मैं सवेरे तुम्हारे घर आऊँगा। उस वक्त तुम मेरे सिर में लाठी मारना। जिससे मैं सोने का बन कर अक्षय हो जाऊँगा। सवेरे जाग कर सेठ स्वप्न को याद करके चिन्ता में बैठ गया। अहो! यह स्वप्न सच्चा होगा या झूठ, नहीं जाना जाता। शायद झूठ ही हो; क्योंकि रात दिन मैं धन की ही चिन्ता में रहता हूँ।

इसी मौके पर उसकी स्त्री ने किसी नाई को

पैर धोने के लिए बुलाया कि पहले कहे अनुसार वह संन्यासी प्रकट हुआ। वह सेठ उसको देख कर ख़ुश हुआ, पास में रक्खी हुई लाठी उठा कर उसके सिर में मारने लगा। वह सोना बन कर उसी समय ज़मीन पर गिर पड़ा। तब वह सेठ एकान्त में उस को अपने घर में ले जाकर नाई को सन्तुष्ट कर बोला, यह धन और कपड़े ले, पर भाई! यह हाल किसी से न कहना।

नाई अपने घर जाकर विचारने लगा कि ज़रूर ये सब बौद्ध संन्यासी सिर में लाठी मारने से सोने के धन जाते होंगे। मैं भी बहुतों को बुला कर सिर में लाठी मारूँ जिससे मेरे पास भी बहुत धन हो जावे। इस तरह विचारते हुए बड़ी तकलीफ़ में रात बिताई। सवेरे उठते ही एक बड़ी लाठी लेकर संन्यासियों की मंडली में जाकर जिनेन्द्र की तीन प्रदक्षिणा करके, जांघ के सहारे ज़मीन पर बैठ कर, मुँह में दुपट्टा लपेट कर यह पढ़ने लगा—

केवल ज्ञानवाले, जिनके चित्त में जन्म से ही कामोत्पत्ति ऊसर के समान रही है ऐसे क्षपणक (जिन) की जीत होती है।

और, वही जीभ है जो जिनकी स्तुति करती

है, वही चित्त है जो जिन में रत है, वही हाथ प्रशंसा के योग्य हैं जो बौद्ध की पूजा करने वाले हैं।

इस तरह स्तुति करके प्रधान क्षपणक के पास जाकर ज़मीन में घोंटू टेक "आपको नमस्कार है" ऐसा कह, धर्मवृद्धि का आशीर्वाद लिया और प्रधान क्षपणक की कृपा से व्रत-दीक्षा लेकर नम्रता-पूर्वक बोला, महाराज! आपको सब मुनियों के साथ आज मेरे घर पर कृपा करनी चाहिए। उसने कहा, हे श्रावक! (धर्म को सुने हुए!) धर्म का जानने वाला हो कर ऐसा कहता है? क्या हम ब्राह्मण हैं? जो न्योता देता है। हमतो सदा, उसी वक़्त की की हुई भक्ति से घूमते हुए, किसी भक्त श्रावक को देख कर उसके घर चले जाते हैं और उसकी बहुत प्रार्थना करने पर केवल जीवन-स्थिति के लिए सिर्फ़ भोजन कर लिया करते हैं। अब तो जाओ, आगे कभी ऐसा न कहना। नाई ने कहा, भगवन्! मैं आपका धर्म जानता हूँ। परन्तु आपको बहुत से सरावगी बुलाते हैं और इस समय पुस्तक बांधने के योग्य बहुत से बेश कीमत कपड़े इकट्ठे किये हैं और पुस्तकें लिखने के वास्ते, लिखने वालों के लिए धन इकट्ठा किया है। इसासे

समय के अनुसार उचित काम करो। तब नाई अपने घर चला गया। घर जाकर खैर की लकड़ी तैयार कर घर के दोनों किवाड़ बन्द करके, डेढ़ पहर भर फिर वहाँ आकर सबसे प्रार्थना करके अपने घर पर लाया। वे सभी कपट-धन के लोभ से, भक्ति करने वाले सरावगियों को छोड़ कर, ख़ुशी हो कर उस के पीछे पीछे चल दिये। कहा है—

जो अकेला रहता हैं, जिसने अपना घर छोड़ दिया है, हाथ ही को जो पात्र समझता है, दिशा जिसके कपड़े हैं ऐसे महात्माओं को भी तृष्णा अपने क़ाबू में कर लेती है, यह तमाशे की बात है।

बूढ़ा होने से, बाल पक जाते हैं, दाँत, आँखें, कान, सभी जीर्ण हो जाते हैं। पर एक तृष्णा जवानी का ही रूप धारण करती जाती है।

तब उन सब साधुओं को घर में ले जाकर किवाड़ बन्द करके नाई उनके सिर में लाठी मारने लगा। उनमें से कोई तो मर गया, किसी का सिर फूटा, कोई चिल्लाता हुआ बाहर भागा। उनका चिल्लाना सुन कर शहर की रक्षा करने वालों ने कहा, अरे! शहर में यह क्या दंगा हो रहा है, देखो, देखो। कुछ मनुष्य उन रक्षकों के साथ दौड़े हुए गये। वहाँ

देखा कि खून से सने हुए क्षपणक भाग रहे हैं। तब उन्होंने उनको मय उस नाई के गिरफतार कर लिया और मरने से बचे हुओं के साथ नाई को कचहरी में पेश किया। न्यायाधीश ने नाई से पूछा, अरे! क्या बात है? नाई ने कहा, हुज़ूर! मैं क्या करूँ। मैंने सेठ मणिभद्र के घर में ऐसा ही काम होते देखा था। नाई ने मणिभद्र के घर में जो जो देखा था, सब बयान कर दिया। तब मणिभद्र को बुलवा कर न्यायाधीश ने पूछा, अरे सेठ! क्या तूने किसी क्षपणक को मारा है। मणिभद्र ने क्षपणक का सारा हाल कह दिया। तब उन्होंने हुक्म दिया कि अहो! इस दुष्ट नाई को सूली पर चढ़ाओ। यह कुपरीक्षित है। ऐसा कहने पर उन्होंने कहा, जो बुरा देखा हो, बुरा जाना हो, बुरा सुना हो, ठीक ठीक परीक्षा की हुई नहीं है तो मनुष्य को ऐसी बात नहीं करनी चाहिए जैसी नाई ने की है। यह ठीक है—

बिना परीक्षा किया हुआ काम नहीं करना चाहिए, परीक्षा किया हुआ ही करना चाहिए। बिना विचारे काम करने से पछतावा होता है जैसे ब्राह्मणी को न्यौले के मारने से हुआ। मणिभद्र ने कहा, यह कैसे? वे न्यायाधीश बोले—

२–ब्राह्मणी और न्यौले की कहानी।

किसी स्थान में देवशर्मा नाम ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री के एक लड़का पैदा हुआ। उसी दिन न्यौली ने एक न्यौला जना। बच्चों पर प्यार करने वाली उस ब्राह्मणी ने अपने बच्चे की नाईं उस न्यौले को भी दूध पिला के और मालिश आदि करके परवरिश की। परन्तु उसका विश्वास न करती थी कि शायद कभी अपनी जाति के दोष से इस बच्चे के साथ उलटा बर्ताव करे।

एक दिन ब्राह्मणी खाट पर लड़के को सुला कर पानी का घड़ा लेकर, ब्राह्मण से बोली, मैं जल के लिए तालाब पर जाती हूँ। तुम इस लड़के की न्यौले से रक्षा करते रहना। ब्राह्मणी के चले जाने पर ब्राह्मण भी घर को सूना छोड़ कर कहीं भिक्षा के लिए चला गया। इसी बीच में दैवयोग से बिल से एक काला साँप निकला। न्यौले ने उसको स्वाभाविक वैरी जानकर भाई की रक्षा करने के लिए उसके साथ लड़ाई की और उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये। ब्राह्मणी के लौटने पर, खून से सने हुए मुँह वाला वह न्यौला खुश हुआ अपना काम ज़ाहिर करने के लिए ब्राह्मणी

माता के सामने गया। माता ने, खून से सने हुए मुँह वाले न्योले को देख कर चित्त में शङ्का की कि शायद इस दुष्ट ने मेरे लड़के को खा लिया है। ऐसा विचार कर जल का भरा हुआ घड़ा उसके ऊपर पटक दिया। न्योले को मार कर रोती हुई जब वह घर पर आई तो बच्चे को वैसा ही सोता हुआ पाया। और पास ही काले सांप के टुकड़े देख कर न्योला पुत्र के मारने के शोक से अपना सिर और छाती पीटने लगी। इतने ही में ब्राह्मण भिक्षा से आकर देखने लगा कि पुत्र के शोक से ब्राह्मणी रो रही है। ब्राह्मणि ने उसे देख कर कहा, अरे लोभ के कारण तूने मेरा कहना न माना। अब पुत्र की मृत्यु से दुःख भोग। यह ठीक कहा है—

अधिक लोभ न करना चाहिए और लोभ बिलकुल छोड़ भी न देवे। अधिक लोभी मनुष्य के मस्तक पर चक्र घूमा करता है। ब्राह्मण ने कहा यह कैसे? ब्राह्मणी बोली—

३—चार ब्राह्मणों की कहानी।

किसी जगह ब्राह्मण के चार पुत्र मित्र बन कर रहते थे। वे एक बार भाग्य से गरीब हो गये—

लगे, अहो ! इस गरीबी को धिक्कार है ।
कहा है—

जिस में सिंह और हाथी रहते हों ऐसा मनुष्यों से रहित और बहुत कांटों वाला वन अच्छा है। उस वन में तिनकों की खाट पर सोना और वक्कल के कपड़े पहन कर रहना अच्छा है। परन्तु भाइयों के साथ धनहीन होकर रहना अच्छा नहीं है।

जिनके पास धन नहीं होता उनका अच्छे प्रकार सेवा करने पर भी, मालिक आदर नहीं किया करता। अच्छे भाई भी उसको त्याग देते हैं। गुण भी शोभा नहीं देते। पुत्र भी छोड़ देते और आपत्तियां बढ़ जाती हैं। अच्छे कुल में पैदा हुई स्त्री भी उनको नहीं चाहती और नीति मार्ग के पुरस्कार से प्राप्त हुए मित्र भी उनके पास नहीं आते।

शूर, रूपवान, भाग्यवान, अधिक बोलने वाला, शस्त्र और शास्त्र का जानने वाले भी मनुष्य की बिना धन के इस मनुष्य लोक में बड़ाई और मान कोई नहीं करता।

वही सब इन्द्रियां, वही नाम, वही बुद्धि, वही वचन बने रहते हैं; परन्तु वही पुरुष धन की गरमी

न माने से ज़रा सी देर में कुछ का कुछ हो जाता है। यह अजीब बात है।

इसलिए कहीं धन कमाने को चलना चाहिए। इस तरह विचार कर वे सब अपना देश तथा मित्र, और भाइयों के सहित घर को छोड़ कर चल पड़े। क्योंकि सत्य को छोड़ कर, भाई बन्धों को छोड़ता तथा माता और जन्मभूमि को भी जल्दी छोड़ कर चिन्ता से व्याकुल हुआ पुरुष अपनी इच्छा पूरी होने वाले देश को चल देता है।

इस तरह चलते चलते वे अवन्तिकापुरी में पहुँचे। वहाँ सिप्रा नदी में स्नान कर महाकाल को प्रणाम कर जब चलने लगे तब भैरवानन्द नामी योगी सामने आगया। तब उसका उचित सत्कार किया और फिर उसी के साथ उसके मठ को गये, उसने पूछा तुम कहाँ से आये हो, और कहा जाओगे? क्या काम है? तब ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि हमने एक काम के लिए यात्रा की है। जहाँ धन मिलेगा वहीं जावेंगे, चाहे सो हो, यह निश्चय है। कहा है—

साहसी पुरुषों को, समय पर परिश्रम करने से दुर्लभ और चाहा हुआ धन मिलता ही है।

पुरुषार्थ से पुरुष की मनोरथ-सिद्धि होती

ही है और जो दैव को मानता है वह भी पुरुषार्थ का ही बड़ा गुण है।

साहसी पुरुष गुरुजनों से बड़ा भय तथा प्राणों को तिनके के समान समझते हैं। महान् पुरुषों का यह अद्भुत चरित्र है।

संसार में शरीर को बिना क्लेश दिये सुख नहीं मिलता। इसलिए कोई उपाय धन-प्राप्ति का बतलाओ। आप बड़ी शक्ति वाले सुने जाते हैं, हम भी बड़े साहसी हैं।

बड़े पुरुष ही बड़े कामों को सिद्ध करने में समर्थ होते हैं। समुद्र के बिना बड़वानल धारण कौन कर सकता है।

तब भैरवानन्द ने उनकी सिद्धि के लिए बहुत उपाय वाली चार बत्तियाँ बना कर दीं और कहा, तुम हिमालय की ओर जाओ। जाते हुए जहाँ बत्ती गिरेगी वहाँ अवश्य तुमको धन मिलेगा। उस स्थान को खोद कर धन निकाल लेना।

ऐसा करने पर जाते हुए एक ब्राह्मण के हाथ से एक बत्ती खुद गिर गई। तब वह उस स्थान को खोदने लगा। वहाँ ताँबे की खान दिखलाई दी। उसने कहा, भाई! अपनी इच्छानुसार ताँबा ले लो।

उन्होंने कहा, मूर्ख ! इसको लेकर क्या करोगे ? बड़ा दरिद्र तो दूर न होगा। उठो, आगे चलो। उसने कहा, तुम जाओ, मैं तो न जाऊँगा। इस तरह कह कर वह तो ख़ूब तांबा लेकर अपने घर को वापस हुआ। वे तीनों आगे चले। कुछ दूर आगे चल कर फिर एक ब्राह्मण के हाथ से बत्ती गिरी। वह जब ज़मीन खोदने लगा तो चांदी की खान निकली। उसने कहा, भाई ! इच्छापूर्वक यहाँ चाँदी ले लो, आगे न चलो। उन दोनों ने कहा, पहले तो तांबे की खान मिली, बाद में चांदी की मिली, इससे आगे ज़रूर सोने की खान मिलेगी। इस चाँदी को बहुत लेने पर भी दरिद्र दूर न होगा। इससे हम दोनों तो आगे जाते हैं और दोनों आगे चल दिये। वह अपनी शक्ति भर चांदी लेकर लौट दिया। आगे दोनों के जाते हुए तीसरे ब्राह्मण के हाथ से बत्ती ज़मीन पर गिर पड़ी। उस ने ख़ुश होकर जब ज़मीन खोदी तो वहाँ सोने की खान दिखलाई दी। अपने साथी से कहा, भाई ! अब तो इच्छापूर्वक सोना ले लो, सोने से अच्छी बेशक़ीमत और क्या चीज़ होगी। उसने कहा, मूर्ख ! तू कुछ नहीं जानता। अरे ! पहले तांबे की खान मिली, उससे आगे चांदी की, फिर सोने की खान

मिली । इससे आगे रत्नों की खान ज़रूर मिलेगी । जिसके पाने से एक ही रत्न से दरिद्रता दूर होगी । उठ, आगे चलें इस बड़े बोझ के लादने से क्या है ? उसने कहा, तुम जाओ, मैं यहीं बैठा तुम्हारी बाट देखता रहूँगा । ऐसा करने पर वह अकेला आगे चला । वह आगे चल कर तेज़ सूर्य की धूप से घबराया और प्यास लगी । पानी और छाया की खोज में वह घूमने लगा और अपनी सिद्धि के रास्ते को भूल गया । घूमते घूमते ख़ून से सना हुआ और मस्तक पर चक्र धारण किया हुआ एक पुरुष मिला । चक्र घूम रहा था । उसके पास जाकर बोला, भाई ! तुम कौन हो ? तुम्हारे सिर पर चक्र क्यों घूम रहा है ? यदि कहीं जल हो तो बताओ ? इतना कहते ही फ़ौरन वह चक्र ब्राह्मण देव के सिर पर गिर पड़ा । उसने कहा, भाई ! यह क्या है, जो मेरे सिर पर भी पड़ने लगा । बतलाओ, यह कब उतरेगा ? इसके कारण मुझे बड़ा दुःख है । उसने कहा, जब तेरी तरह कोई पुरुष सिद्ध बत्ती हाथ में लेकर तुझसे बात करेगा तभी यह तेरे सिर से उतर कर उसके सिर पर जा गिरेगा । उसने कहा, यहाँ रहते हुए तुमको कितना समय हुआ । उसने पूँछा,

आज कल राजा कौन है ? ब्राह्मण ने कहा, वीर वत्स राजा है। उसने कहा, मैं काल-संख्या जानता नहीं, परन्तु जब राम राजा थे तब मैं ग़रीबी के सबब सिद्ध बत्ती लेकर इस रास्ते से आया था तब मैंने, जिसके सिर पर चक्र घूमता था ऐसे एक पुरुष से पूँछा था, उसी समय मेरे सिर पर यह चक्र आ गिरा था।

फिर ब्राह्मण ने पूँछा भाई ! यहाँ तुमको जल और भोजन किस प्रकार मिलता है ? उसने कहा, भद्र ? कुबेर ने धन-हरण के भय से सिद्धों को यह भय दिखलाया है जिससे कोई भी यहाँ नहीं आता। यदि कोई आता भी है तो भूख, प्यास, नींद और जरा-मरण से रहित हो केवल दुःख ही दुःख भोगता है। अब मुझे घर जाने की आज्ञा दो, यह कह कर वह तो चल दिया।

जब कि सुवर्ण सिद्धि (जिसको सोने की खान मिली थी) ने, उसको बहुत देर तक आता न देखा तो उसको ढूँढ़ने के लिए वहाँ से चला। आगे चल कर सुवर्ण सिद्धि ने देखा कि वह, खून से सना हुआ है उसके मस्तक पर तेज़ चक्र घूम रहा है और दुःखी हुआ रो रहा है। उसके पास जाकर आँखों में आँसू ला

कर उसने पूछा, भाई! यह क्या है? उसने कहा, प्रारब्ध का भोग है। उसने कहा, किस तरह? उसने चक्र का सारा हाल सुना दिया। यह सुन कर उसने उसकी बड़ी निन्दा करके कहा, अरे भाई! मैंने तुझे बहुत रोका था, पर तू न माना। अब क्या किया जाये? विद्वान्, कुलीन भी बुद्धिरहित होता है, यह सुन चक्रधर ने कहा, अरे भाई! यह अकारण है। सुनो—

दुष्ट दैव से नष्ट हुए बड़े बड़े बुद्धिमान् भी नष्ट हो जाते हैं और थोड़ी बुद्धिवाले एक कुल में सदा आनन्द भोगते हैं।

जिसकी कोई रक्षा करने वाला नहीं है वह, यदि दैव रक्षा करता है तो बना रहता है। और अच्छी तरह रक्षा किया हुआ भी यदि दैव नहीं चाहता तो नष्ट हो जाता है। वन में छोड़ा हुआ अनाथ जीता रहता है और घर में यत्न करने पर नहीं जीता।

यह शतबुद्धि सिर पर है और सहस्रबुद्धि लटकता है। हे भद्रे! एक बुद्धिवाला मैं पवित्र जल में खेल रहा हूँ। सुवर्णसिद्धि ने कहा, कैसे? चक्रधर ने कहा—

४-दो मछली और एक मेंडक की कहानी

एक तालाव में शतवुद्धि और सहस्रवुद्धि नाम की दो मछलियां रहती थीं। उनका एक वुद्धि नाम का एक मेंडक मित्र वन गया। वे तीनों ही रोज़ जल के किनारे वैठ कर अच्छी अच्छी वातें करके फिर जल में घुस जाते थे। एक वार वात चीत करने के समय, हाथ में जाल लिये हुए और वहुत सी मारी मछलियों को सिर पर रक्खे हुए धीवर शाम के वक्त उस तालाव के पास होकर गुजरे। तालाव को देख कर कहने लगे, अरे भाई! इस तालाव में मछलियाँ वहुत हैं और पानी भी थोड़ा है। इसलिए मछली मारने को यहाँ सवेरे आवेंगे। यह कह कर अपने घर को चले गये। तव मछलियाँ घवरा कर आपस में सलाह करने लगीं। मेंडक ने कहा, अरे शतवुद्धि! धीवरों का कहना तुमने सुना? अव क्या करना चाहिए? यहाँ से भग जाना चाहिए या इसी में छिप कर रहना चाहिए जो ठीक हो, सो अभी करना चाहिए। यह सुन कर सहस्रवुद्धि ने हँस कर कहा, मित्र! डरो मत, सिर्फ़ सुनने मात्र से ही डरना नहीं चाहिए। पहले तो धीवर यहाँ

आवेंगे ही नहीं और अगर आये भी तो तेरी अपनी बुद्धि के प्रभाव से अपने सहित रक्षा करूँगी। मैं जल की बहुत चालें जानती हूँ। यह सुन कर शत-बुद्धि ने कहा, अरे! तुम ठीक कहती हो, तुम सहस्र बुद्धि हो न? यह ठीक कहा है—

बुद्धिमानों की बुद्धि के सामने संसार में कोई चीज़ अगम्य (न प्राप्त होने योग्य) नहीं होती। बुद्धि से ही चाणक्य ने हाथ में तलवार ले कर नन्द वंश का नाश कर दिया था।

और जहाँ हवा और सूर्य की किरणें नहीं पहुँच सकतीं वहाँ भी बुद्धिमानों की बुद्धि पहुँच जाती है।

इसलिए सिर्फ़ सुनने से ही पिता आदि से पाई हुई इस जन्मभूमि को छोड़ना नहीं चाहिए। किसी प्रकार भी डरना नहीं चाहिए। मेंडक ने कहा, मित्रो! मेरी तो एक ही बुद्धि भागने की है। मैं तो अभी अपनी स्त्री के साथ दूसरे तालाब को जाता हूँ। ऐसा कह कर मेंडक तो उसी समय मय अपनी स्त्री के दूसरे तालाब में चला गया।

सवेरा होते ही धीवरों ने आकर छोटी, बड़ी मछली, मेंडक, केंकड़े आदि जलचर पकड़े। वे

दोनों शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि भागती हुईं, अनेक तैरने की चाल जानने से बहुत देर तक बची रहीं, अन्त में जाल में पड़ कर मर गईं। तीसरे पहर प्रसन्न होकर धीवर अपने घर की ओर चले। भारी होने से एक ने शतबुद्धि को कंधे पर रख लिया और सहस्रबुद्धि को लटका कर ले चला। तब रास्ते में मेंडक ने उनको ले जाता हुआ देख कर अपनी स्त्री से कहा, प्रिये! देखो! शतबुद्धि सिर पर है और सहस्रबुद्धि लटक रही है। हे भद्रे! मैं एकबुद्धि इस पवित्र जल में खेल रहा हूँ।

इससे मैं कहता हूँ कि निरी बुद्धि का ही प्रमाण नहीं है। सुवर्णसिद्धि ने कहा, यद्यपि ऐसा है तो भी मित्र की बात टालनी नहीं चाहिए। क्या किया जावे! मेरे रोकने पर भी तो तुम न ठहरे और विद्या का घमण्ड किया। यह ठीक कहा है—

धन्य, मामा धन्य! मेरे कहने पर भी गाना प्यारा लगने से न रुके जिससे यह अजीब मणि बाँध कर गाने का इनाम पाया है। चक्रधर ने कहा, कैसे? सुवर्णसिद्धि बोला—

५—गधा और गीदड़ की कहानी।

किसी स्थान में उद्धत नाम का एक गधा रहता था। वह सदा धोबी के घर का काम करके रात को अपनी इच्छानुसार घूमा करता था। और सबेरा होते ही बाँधे जाने के डर से ख़ुद ही धोबी के घर आ जाता था। धोबी भी उसको बाँध दिया करता था। एक बार रात को खेतों में घूमते हुए उसकी एक गीदड़ से दोस्ती हो गई। वह मोटा हो जाने से खेत की बाड़ तोड़ कर ककड़ी के खेत में गीदड़ के साथ सदा घुस जाता था। इस तरह वे दोनों रोज़ अपनी इच्छानुसार ककड़ी खा कर सवेरे अपने अपने स्थान को चले जाते थे। एक दिन मदोद्धत गधे ने गीदड़ से खेत के अन्दर कहा, अरे भानजे, देख, चाँदनी कैसी खिली हुई है, मैं तो गीत गाऊँगा। बतलाओ, किस राग से गाऊँ। वह बोला, मामा! इस अनर्थकारी काम के करने से क्या फ़ायदा है। हम दोनों चोरी के काम में लगे हुए हैं। ऐसी जगह चोरों को चुपचाप रहना चाहिए। दूसरे यह कि तेरा गाना भी मीठा नहीं है, शङ्ख की सी आवाज़ वाला है दूर से ही सुनाई देता है। इस

भागने लगा। इसी समय गीदड़ भी उसको दूर से देख कर हँसता हुआ बोला—

धन्य हो मामा! मेरे कहने पर भी गीत गाने से तुम न रुके, यह अजीब मणि बाँध ली, गीत का प्रसाद तो भला मिला!

इसी तरह तुम भी मेरे रोकने से न रुके। यह सुन चक्रधर ने कहा, अरे मित्र! यह सच है कि सभी मनुष्य न मानने के योग्य आशा रूपी राक्षसी को पा कर हास्य पदवी को पाते हैं। यह किसी ने ठीक कहा है—

जो न होने के योग्य, न आई हुई चिन्ता करता है वह सोमशर्मा के पिता की नाईं पांडु (पीला) हो कर सोता है। सुवर्णसिद्धि ने कहा—कैसे? चक्रधर ने कहा—

६—सोमशर्मा के पिता की कहानी।

किसी शहर में स्वभाव से कृपण (कंजूस) एक ब्राह्मण रहता था। भिक्षा में पाये हुए और खाने से बचे हुए सत्तुओं से उसने एक घड़ा भर दिया। वह घड़े को खूँटी पर लटका कर, उसके नीचे चारपाई बिछा कर लगातार उसको देखा करता था। एक बार सोते सोते रात में वह विचारने लगा कि यह घड़ा

सत्तुओं से भरा हुआ है। यदि अकाल पड़ जावे तो यह सत्त सौ रुपये को विकेगा। उन रुपयों से मैं दो बकरी मोल लूँगा, फिर छः महीने में उनसे बहुत सी बकरियां हो जावेंगी। फिर बकरियों से बहुत सी गायें ख़रीदूँगा। गौओं से भैंस, भैसों से घोड़ी, घोड़ी से बहुत से घोड़े पैदा होंगे? उनको बेंच कर बहुत सा धन हो जावेगा। तब मैं एक बढ़िया मकान बनवा दूँगा। बाद कोई ब्राह्मण मेरे घर पर आ कर मेरी शादी कर देगा उससे लड़का पैदा होगा। उसका मैं सोमशर्मा नाम रक्खूँगा। जब जांघों से चलने योग्य लड़का हो जावेगा तब मैं पुस्तक ले कर घुड़साल के पीछे बैठ कर विचारूँगा। जब सोमशर्मा मुझको देख कर माता की गोद से घुटनों चलता हुआ, घोड़े के खुर के पास होता हुआ मेरे पास आवेगा तब मैं ब्राह्मणी से क्रोध कर के कहूँगा कि इस बच्चे को ले। वह घर के काम में लगी हुई होने से मेरा कहना न सुनेगी तो उठ कर मैं ऐसी लात मारूँगा। इस तरह ध्यान में लगे हुए उसने ज्यों ही दीवार में लात मारी त्यों ही वह घड़ा गिर कर टूट गया और सत्तुओं के बिखरने से वह पीला हो गया।

सुवर्णसिद्धि ने कहा, ऐसा ही है तेरा कसूर क्या है। लोभ में पड़ कर सब दुःखी होते हैं।

इस तरह कह कर फिर भी चक्रधर से सुवर्णसिद्धि ने कहा कि मुझे आज्ञा दो, मैं अपने घर जाऊँ। चक्रधर ने कहा, भद्र ! आपत्ति के समय के लिए धन और मित्रों का संग्रह किया जाता है। सो मुझ को छोड़ कर आप कहाँ जाते हैं ?

सुवर्णसिद्धि ने कहा, अरे ! यह सच है लेकिन सुगम स्थान में शक्ति हो तो । यह तो स्थान मनुष्यों के लिए अगम्य है, किसी में भी तुझे छुड़ाने की शक्ति नहीं है। और ज्यों ज्यों चक्र के घूमने की तकलीफ़ से तेरे मुँह पर तबदीली देखता हूँ त्यों त्यों मेरी समझ में यह आता जाता है कि जल्दी चला जाऊँ जिससे मेरे साथ कोई अनर्थ न हो जावे। इससे मुझे तो जाने की आज्ञा दो। और तुम यहीं लोभ-वृक्ष का फल भोगो। चक्रधर ने कहा, अरे ! यह बिना कारण के हुआ है। दैव-वश से मनुष्यों को बुरा भला फल मिला करता है।

सुवर्णसिद्धि ने कहा, यह सच है कि दैव के अनुकूल होने से सब काम ठीक होते हैं तो भी पुरुषों को अच्छे पुरुषों के वचन मानने चाहिएँ।

चक्रधर ने कहा, यह ठीक है। तुम घर जाओ, परन्तु अकेले न जाना। कहा है—

ज़ायक़ेदार चीज़ अकेला न खावे, सोते हुए अकेला न जागे। अकेला सफ़र न करे और अके किसी काम को न विचारे। रास्ते में दू कायर पुरुष को भी साथ ले जाने से हितकर हो है जैसे दूसरे संगी केंकड़े ने जीवन की रक्षा कं

सुवर्णसिद्धि ने कहा, कैसे? चक्रधर बोला—

७—एक ब्राह्मण और केंकड़े की कहा

किसी स्थान में ब्रह्मदत्त नाम का एक ब्राह्म रहता था। वह एक दिन किसी काम से एक गाँव के जाने लगा। तब उस की मा ने कहा, बेटा! अकेल क्यों जाता है, किसी को साथ लेता जा। उस कहा, मा! डरे मत, यह रास्ता डर का नहीं है ज़रूरी काम होने से अकेला ही जाऊँगा। तब उस के जाने का निश्चय जान कर वह पास की बावड़ी में से एक केंकड़ा ले आई और बोली, बेटा! यदि तुम जाते ही हो तो यह केंकड़ा तुम्हारा होगा इसको साथ लेते कहने पर, उसे ले

ल और बरतन में रख कर जल्दी से चल
या। रास्ते में चलते हुए गर्मी से घबरा
र किसी वृक्ष की छाया में सो गया। इसी मौक़े
र वृक्ष की खोखल में से निकल कर एक साँप
सके पास आया। जब पास में कपूर की
सुगंध आई ते उसको छोड़ दिया और
कपड़े के फाड़ कर जल्दी कपूर खाने लगा।
तब उसमें बैठे हुए केंकड़े ने उसको मार डाला।
ब्राह्मण ने जब जाग कर देखा ते पास ही काले
साँप के कपूर की थैली पर बैठा देख कर
विचारने लगा, अहा! केकड़े ने इसको मारा है
और प्रसन्न हो कर कहने लगा, कि मेरी मा ने ठीक
कहा था कि पुरुष को सहायकारी साथ रखना
चाहिए, अकेला न जाना चाहिए। मैंने श्रद्धापूर्वक
उस के वचन माने, इसी से केंकड़े से, साँप को
मारने से बचा। इस तरह कह कर ब्राह्मण, जहाँ
जाना था, वहाँ चला गया।

यह सुन कर सुवर्णसिद्धि उसकी आज्ञा से
अपने घर के चला गया।

समाप्त